टोंक जिले में कृषि के विकास का भौगोलिक अध्ययन

बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ

भूगोल विषय में पीएचडी उपाधि हेतु शोध प्रस्तावना

शोध निर्देशक.डॉ. धीर सिंह

JV'n University Jaipur

शोधार्थी.. हेमराज माली

JV'n University Jaipur

(Depratment of)

(Feculty of Arts)

Jyoti Vidyapeeth Women's University . Jaipur

2023

विषय सूची

क्र.सं.			विषय	पृष्ठ सं
1	प्रथम अध्याय	1	परिचय	3
2		2	भौगोलिक पृष्ठभूमि	3
3		3	साहित्य समीक्षा	4
4		4	शोध परिकल्पना	4
5		5	शोध उद्देश्य	5
6		6	अनुसंधान पद्वति	5
7		7	डेटा संग्रह के प्रकार (आंकडो के स्त्रोत)	6-7
8	द्वितीय अध्याय	1	भौतिक विभाजन एवं भौगोलिक स्थिति	8-9
		2	भूगर्भिक संरचना व उच्चावच	9-10
		3	जलवायु एवं तापमान	10-11
		4	अपवाह तन्त्र	11-12
9	तृतीय अध्याय	1	मिट्टीयॉ	12-13
		2	वन एवं वनस्पति	13-14
10	चतुर्थ अध्याय	1	जल संसाधन एवं अवधारणा	14
		2	जल संसाधन क्षेत्र 1. सतही जल संसाधन (वर्षा, नदियॉ ,बॉध एवं तालाब 2. भूमिगत जल संसाधन	15-18
		3	जलग्रहण विकास दिशा-निर्देश	19-20
11	पंचम अध्याय	1	कृषि क्षेत्र	21-23
12	षष्ठम् अध्याय	1	निष्कर्ष	24
13		2	सन्दर्भ ग्रन्थ सूची	24-25

-:परिचय :-

परिचय - प्राचीन समय से ही टोंक जिला भौगोलिकए और प्राकृतिक दृष्टि से भरपूर होने के कारण लगातार कृषि भूमि उपयोग परिवर्तन शस्य.परिवर्तनए बढ़ती जनसंख्या शहरीकरण में वृद्धि के फलस्वरूप उपलब्ध स्थानीय जल संसाधनों का अतिदोहन एवं गुणवत्ता में लगातार होती कमी के परिणामस्वरूप वर्तमान समय में जल संसाधनों का प्रबन्ध एवं कृषि का सतत् विकास करने हेतु शोध अनिवार्य है ताकि समय रहते गहन दुष्परिणामों से बचा जा सके। कृषि संसाधनों का संरक्षण व सुधार तथा पोषणीय विकास की समस्याओं की ओर ध्यानाकर्षित करने हेतु एवं जिले में बढ़ते पर्यावरणीय असन्तुलन को सन्तुलित बनाने हेतु जिले के कृषि संसाधनों एवं सतत् विकास पर शोध कार्य आवश्यक है।

अध्ययन क्षेत्र के लिए टोंक जिले का चयन किया गया है। टोंक जिला भी राजस्थान की भूतपूर्व रियासतों में से एक है प्राचीन अभिलेखों के अनुसार सम्राट अकबर के शासन काल में जयपुर रियासत के राजा मानसिंह ने टोरी और टोकरा जिलों को अधिकार में लिया था। टोकरा के बारह गाँव भोला नाम के ब्राह्मण को सन् 1643 में अनुदान स्वरूप स्वीकृत किये गये, जिसने अपने इस ग्राम समूह का नामकरण टोंक किया। बाद में इनके स्वामित्व पर होल्कर, सिंधिया व जयपुरराजघरानों में विवाद चलता रहा। सन् 1804 में इन दोनों जिलों को अंग्रजों द्वारा फतह कर, टोंक जिले को जयपुर रियासत को सौंप दिया गया। राजस्थान के एकीकरण के बाद टोंक एक जिले के रूप में अस्तित्व में आया था। टोंक जिला प्रारम्भ में जयपुर संभाग व बाद में अजमेर सम्भाग के अर्न्तगत लिया गया था।

भौगोलिक पृष्ठभूमि – भौगोलिक पृष्ठभूमि के बिना किसी भी क्षेत्र से परिचय अधूरा ही रहता है। भौगोलिक पर्यावरण में भूगर्भिक संरचना उच्चावच अपवाह तंत्र मृदाएँ जलवायु भूमिगत जल व प्राकृतिक वनस्पति आदि का वर्णन किया गया है। भौतिक पर्यावरण क्षेत्र ग्रामीण विकास के लिए ग्रामीणवर्द्धन केन्द्रों की योजना के बीच गहरा संबंध . है। इसलिए किसी भी क्षेत्र के विकास पर वहाँ के भौतिक पर्यावरण का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। अध्ययन क्षेत्र भी अपने आप में विभिन्न भौगोलिक विशेषताओं को समेटे हुए है। टोंक जिला राजस्थान के दक्षिण.पूर्वी भाग में स्थित हैए जिसे साधारणतया शुष्क राज्य का अपेक्षाकृत हरा भाग कहा जा सकता है। जिला क्षेत्र पतंग या रोम्बस के आकार का हैए जिसके पूर्वी और पश्चिमी भाग कुछ अंदर की ओर झुके हुए हैं और इसका दक्षिण.पूर्वी भाग सवाई माधोपुर और बूंदी जिलों के बीच कोटा जिले के उत्तरी सिरे को छूने के लिए निकला है जबकि दक्षिण.पश्चिमी भाग में बाहर निकला है।

टोंक जिले का भौगोलिक धरातल लगभग समतल है। यह जिला समुद्र तल से 264.32 मीटर ऊँचा है। जिले की महत्वपूर्ण बनास नदी इसे दो भागों में विभाजित करती है। टोंक जिले के उत्तर में जयपुर, उत्तरपूर्व में दौसा, पूर्व में सवाई माधोपुर, दक्षिण पूर्व में कोटा, दक्षिण में बून्दी, दक्षिण पश्चिम में भीलवाड़ा तथा पश्चिम में अजमेर जिला स्थित है। यह जिला $25^{o}41'$ उतरी अंक्षाश से $26^{o}34'$ उत्तरी अक्षांश तथा $75^{o}07'$ पूर्वी देशान्तर से $76^{o}19'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इसका क्षेत्रफल 7194.00 वर्ग किलोमीटर है। टोंक के कुल क्षेत्रफल में 6952.13 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र ग्रामीण व 241.87 वर्ग किलोमीटर शहरी है। वर्तमान में टोंक जिले में 7 उपखण्ड तथा 7 तहसीलें हैं। यहां कुल 8 कस्बे हैं। इसके साथ ही जिले में कुल 1189 राजस्व ग्राम हैं, जिसमें 1112 ग्राम आबाद हैं तथा शेष 76 ग्राम गैर आबाद हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार टोंक जिले की कुल जनसंख्या 14,21,326 है जिसमें पुरूषों की संख्या 7,28,136 तथा महिलाओं की संख्या 6,93,190 है। टोंक की जनसंख्या राजस्थान की कुल जनसंख्या (6,86,21,012) का 2.07 प्रतिशत है। 2001 की जनगणना के अनुसार टोंक की कुल जनसंख्या 12,11,671 थी जिसमें पुरूषों की संख्या 6,26,436 तथा महिलाओं की संख्या 5,85,235 थी। जिले में जनसंख्या का घनत्व 198 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। जो कि 2001 में 169 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. था। टोंक जिले में प्रति 1000 पुरूषों की तुलना में महिलाओं की संख्या 2011 में 952 है। यह संख्या 2001 में 934 महिलाएँ प्रति हजार पुरूषों पर थी। टोंक जिले में साक्षरता का प्रतिशत 61.60 है। जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता 58.00 प्रतिशत तथा नगरीय क्षेत्रों में साक्षरता 73.80 प्रतिशत है। पुरूषों में साक्षरता का प्रतिशत 77.11 व महिलाओं में 45.45 प्रतिशत है। जिले की जलवायु शुष्क तथा गर्म है। वर्ष भर में सामान्य वर्षा 55.96 सेन्टीमीटर होती है। गर्मियों में अधिकतम तापमान 49 डिग्री सेल्सियस तथा मध्य तापमान 41 डिग्री सेल्सियस रहता है। जनवरी वर्ष का सबसे ठण्डा महीना होता है। इन दिनों न्यूनतम तापमान 4–5 डिग्री सेल्सियस रहता है। टोंक का कीमती पत्थर तामड़ा (गारनेट) पूरे राज्य में प्रसिद्ध हैं। यहां का राजमहल क्षेत्र इसके लिए जाना जाता हैं। गारनेट की यहाँ खानें हैं। इसके अलावा टोंक इमारती पत्थर, कंकड़, बजरी, स्लेट स्टोन के लिए भी मशहूर है जो यहां बहुतायत में उपलब्ध है तथा जिले को अच्छी आय भी होती

है। टोंक जिले के प्रमुख पयर्टक/आकर्षक स्थलों में सुनहरी कोठी एवं मौलाना अबुल कलाम अरबी पारसी शोध संस्थान, (टोंक तहसील), हाथी भाटा, (ककोड़ तहसील उनियारा), बीसलपुर बांध एवं बीसलदेव मन्दिर (बीसलपुर तह. देवली), डिग्गी कल्याण का मन्दिर (डिग्गी, तह. मालपुरा), भेड़ व ऊन अनुसंधान संस्थान (अविकानगर, तह. मालपुरा), वनस्थली विद्यापीठ, (वनस्थली, तह. निवाई), हाडी रानी कुण्ड एवं बावड़ियाँ (तहसील-टोडाराय सिंह) आदि प्रमुख हैं।

2.साहित्य समीक्षा :-

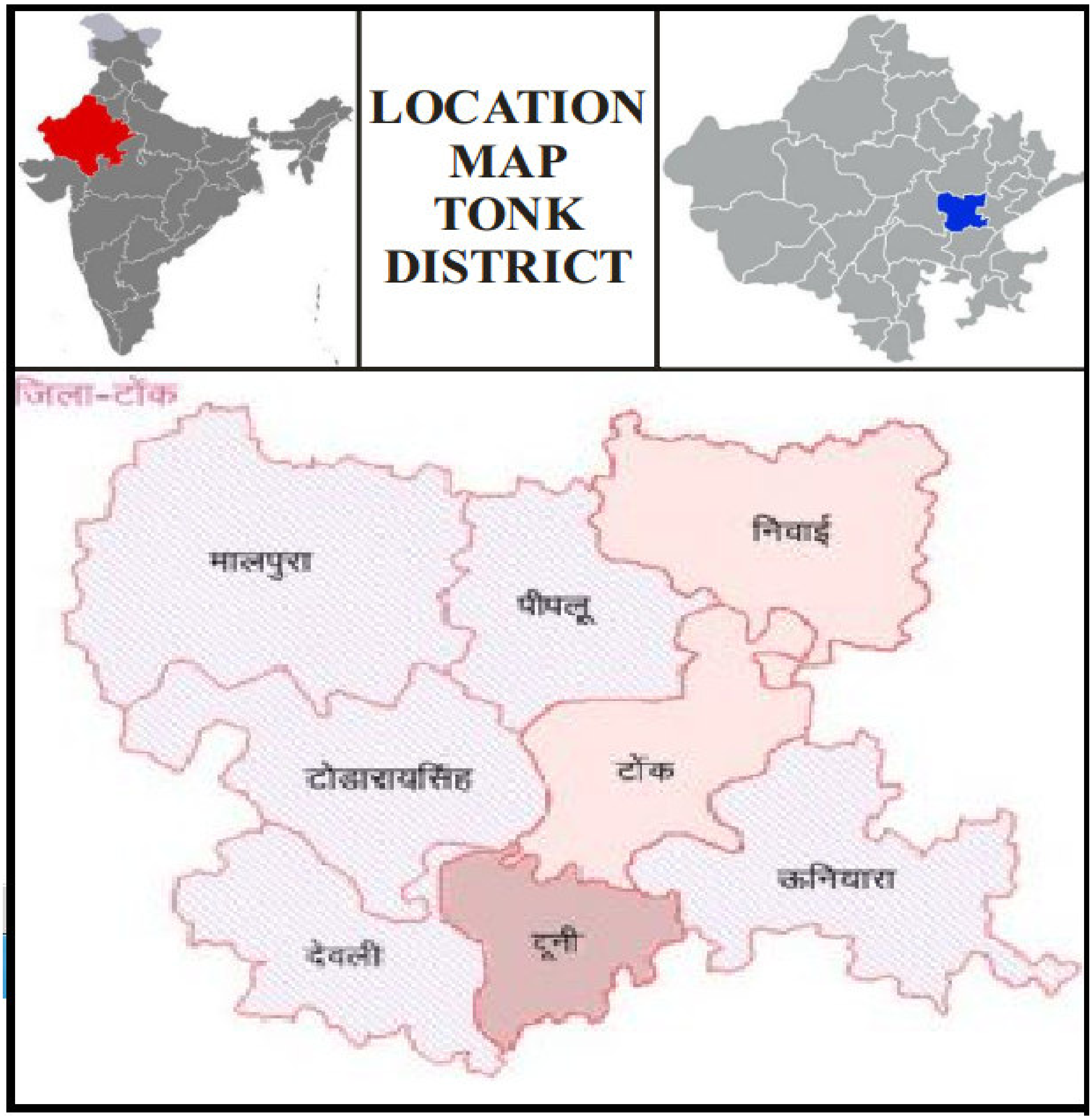

देश में विशेषतः पिछले चार दशकों में भारतीय भूगोलवेताओं ने कृषि संसाधनों के अध्ययन में रूचि दिखायी। भारत में कृषि संसाधनों के विषय पर वैज्ञानिक विधियों के आधार पर विस्तृत विचार किये गये हैं।

- *बी.सी.जाट (2000) ने जल ग्रहण के प्रबंधन सम्बन्धी उपायों को विस्तार से समझाया है।*
- *सी.बी.रेड्डी ने (2004) अपनी रिर्पोट जल ग्रहण विकास कार्यक्रम मेंजलग्रहण के पक्ष में सेवाऐं देने वाली क्रियाओं के जाल व आन्ध्र प्रदेश में जल संरक्षण के लक्ष्य पर अपने विचार प्रस्तुत किये।*

- *उपरोक्त के अलावा वी. राजगोपालन (1991) ने भारत में समन्वित जलग्रहण विकास की कुछ समस्याओं व स्वरूपों का वर्णन किया। 1993 में पी.खन्ना ने संसाधनों के पोषणीय विकास पर विस्तार से अपने विचार दिये। राष्ट्रीय स्तर पर जल ग्रहण विकास कार्यक्रम की शुरूआत हनुमन्त राय समिति की रिर्पोट के आधार पर अप्रैल 1995 में डी.डी.ए. पी., डी.डी.पी.आईडब्ल्यू.डी.पी. कार्यक्रमों के साथ हुई। वी. सी. कटियार (1997) ने पर्यावरणीय विषयों में संसाधनों की*

कमी और पोषणीय विकास पर अपने विचार प्रस्तुत
किये।

- 1967 में जल संसाधनों में मुख्यतः सतही जल प्रवाह, भूजल की ऊपरी सतह व निम्न सतह, भूजल की गुणवत्ता, जल भण्डार व जल के बंटवारे से सम्बन्धित बहुत सारे शोध पत्र व लेख प्रस्तुत किये गये।

3.शोधपरिकल्पना

अध्ययनकेउद्देश्योंकोप्राप्तकरनेकेलिएनिम्नलिखितपरिकल्पनाएं तैयारकीहैं रू.

- (1) जिले में विद्यमान उपलब्ध जल संसाधनों को प्रस्तुत करना।
- (2) जिले की भौगोलिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करना।
- (3) जल संसाधनों से सम्बन्धित आँकड़ों को प्रस्तुत करना।
- (4) विभिन्न क्षेत्रों में जल के उपयोग(खपत) को प्रस्तुत कर मूल्यांकन करना
- (5) जिले में उपलब्ध जल की गुणवत्ता का विवेचन करना।

4. उद्देश्य

शोधअध्ययनकेप्रमुखउद्देश्यनिम्नलिखितहैः-

1. अध्ययनक्षेत्रकेकृषिविकासस्तरकाअध्ययनकरना।
2. भौगोलिकपरिस्थितियोंकेअनुरूपकृषिफसलप्रारूपकाअध्ययनकरना।
3 कृषिभूमिउपयोगएवंसिंचाईप्रतिरूपोंमेंआयापरिवर्तनकाअध्ययनकरना
4. जिलेमेंकृषिविकाससेउत्पन्नपर्यावरणीयसमस्याओंकाअध्ययनकरनियोजनहेतुसुझावप्रस्तुतकरना।
5 .वर्तमानमेंटोंकजिलेमेंकृषिउपयोगीजलकीगुणवत्तापरअध्ययनकरना।

5 .अनुसंधान पद्धति

प्रस्तावितशोधप्रबंधमेंऐतिहासिकविश्लेषणात्मकतुलनात्मकविधिकाप्रयोगकियाजायेगा।ऐतिहासिकशोधविधिद्वाराअतितकेविचारोंकेआधारपरवर्तमानमेंप्रासंगिकताज्ञातकरना।इसविधिसेग्रंथालयोंसेविचारोंकीविगतघटनाओं एवंप्रवृतियोंकेआधारपरवर्तमानपरिदृश्यकोसमझाजासकेगा।विश्लेषणात्मकविधिद्वारापहलेसेउपलब्धतथ्योंयाजानकारीकाउपयोगकियाजायेगाऔरइससामग्रीकाआलोचनात्मकमूल्यांकनकरनेकेलियेउसकाविश्लेषणकियाजायेगा।तुलनात्मकशोधविधिकेअन्तर्गतकिन्हींमानदण्डोंकेआधारपरदोयादोसेअधिकपरिस्थितियोंअथवातथ्योंकीतुलनाजासकेगी।शोधहेतुअनेकप्रकारकीसामग्रीकेसंकलनहेतुप्राथमिकसामग्रीवद्वितीयकसामग्रीकाप्रयोगकियाजायेगा।इसशोधकार्यमेंकौटिल्यकेमहिलासम्बधितविचारोंकाविश्लेषणहेतुद्वितीयकसामग्रीकाप्रयोगकियाजायेगाजो-

1. पुस्तकालयमेंउपलब्धसभीसूचनाएँ 2. पुस्तके 3. लेख,पत्र-पत्रिकाऐं 4.पाण्डुलिपि 5. पूर्वमेंहुएशोधअध्ययन

पारिस्थितिकनारीवादकेविचारोंकाविश्लेषणात्मकअध्ययनकेक्षेत्रवर्तमानसंदर्भमेंप्रासंगिकताहेतुप्राथमिकसामग्रीकाप्रयोगकियाजायेगा।प्राथमिकसामग्रीकोएकत्रितकरनेकेलियेनिम्नलिखितप्रविधिकाप्रयोगकियाजायेगा।

1. साक्षात्कार 2.अनुसूचीप्रश्नावली

वर्तमान काल के विद्वानों द्वारा लिखित सहायक ग्रंथोंसेसामग्रीप्राप्तकी जा सकेगी। अनेकपत्र-पत्रिकाओं, इन्टरनेटजनरल्स, शोधग्रंथोंआदिकीसहायतालीजायेगी।इसअध्ययनमेंऐतिहासिक,विश्लेषणात्मक, तुलनात्मकएवंविकासात्मकअनुसंधानविधिकाप्रयोगकियाजायेगा।इसशोधकेदौरानसार्थकपुस्तकों, लेखों, दस्तावेजोंऔरअन्यस्त्रोतोंकीसहायतालीजायेगी, जिससे अध्ययन में समग्रता होगी। वर्तमान कालके विद्वानों द्वारालिखितसहायकग्रंथोंसेसामग्रीप्राप्तकीजासकेगी।अनेकपत्र-पत्रिकाओं, इन्टरनेटजनरल्स, शोधग्रंथोंआदिकीसहायतालीजायेगी।

डेटा संग्रह के प्रकार

आँकड़ों के स्त्रोत :- *किसी भी अध्ययन के लिए आँकड़ों की आवश्यकता होती है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध अन्वेषण प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है -*

(1) क्षेत्रीय सर्वेक्षण एवं प्राथमिक आँकड़ों का संकलन किया गया है।
(2) प्रस्तुत शोध अध्ययन में विभिन्न प्रकार के प्रकाशित द्वितीयक आँकड़ों का संग्रहण सांख्यिकी विभाग, राष्ट्रीय सूचना केन्द्र, टोंक केन्द्रीय पुस्तकालय -जयपुर, विश्वविद्यालय पुस्तकालय - जयपुर, जिला पुस्तकालय - टोंक, विश्वविद्यालय पुस्तकालय - कोटा एवं सम्बंधित विभागों से किया गया है।
(3) साक्षात्कार, प्रश्नावली एवं अनुसूचियों से प्राथमिक आँकड़ों का संकलन कियागया है।
(4) संबंधित साहित्य संकलन सम्बंधित क्षेत्र के ऐतिहासिक ग्रंथ, शोध ग्रन्थ,गजेटियर, प्रतिवेदन और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में से आवश्यक आँकड़े प्राप्त किये गये हैं।
(5) जिले में जलग्रहण क्षेत्र के आधार पर आँकड़े उपग्रह चित्रों द्वारा प्राप्त किए गए हैं।
(6) छायाचित्र एवं मानचित्रण जिले के जल संसाधनों (प्राकृतिक एवं मानव निर्मित) के स्थानिक प्रारूप वितरण का आवश्यकतानुसार शोध प्रबंध मेंसंलग्न कर मानचित्रों, आरेख, चित्रों तथा चार्ट का भी निर्माण किया गया।

विधि तन्त्र :-

प्रस्तुत अनुसंधान विश्लेषण में टोंक जिले में उपलब्ध जल संसाधनों काप्रबन्धन एवं उसके लिए पोषणीय योजना तैयार करने के लिए निम्न विधियों कोअपनाया गया है -

(1) जिले के विभिन्न तथ्यों (जल, वनस्पति ,जलवायु आदि) के प्रदर्शन में विभिन्न मानचित्र भिन्न-भिन्न पैमानों पर तैयार किये गये हैं।

शोध समस्या का चयन :-

एक अंत:वैज्ञानिक विषय के रूप में भूगोल का मुख्य लक्ष्य प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक वातावरण का सामंजस्य पृथ्वीतल के विभिन्न क्षेत्रों में निरन्तर परिवर्तनशील परिस्थितियों के साथ मानव हित के संदर्भ में स्थापित करना है। भूगोल विषय के अन्तर्गत क्षेत्रीय सर्वेक्षण का महत्व प्राचीन भूगोलवेत्ताओं की भौगोलिक यात्राओं के आधार पर देखने को मिलता है। इब्न-ए-बतूता, अलबरूनी, हम्बोल्ट, रेटजेल और विडाल-डी-ला-ब्लाश तथा वर्तमान समय में कर्नल टॉड की यात्राएं व उनका लिखित विवरण सभी विद्यार्थियों के लिए शोध का आधार है। टोंक जिले की भौगोलिक स्थिति प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से भरपूर होने के साथ ही आर्थिक क्षेत्र में कृषि विस्तार, औद्योगिकीकरण, पर्यटन का प्रमुख केन्द्र होने के कारण स्थानीय जल संसाधनों का अतिदोहन, गुणवत्ता ह्रास, सतत् विकास में बाधा के कारण इस विषय पर चिंतन अत्यावश्यक है।

- **टोंक जिले के अध्ययन हेतु निम्नलिखित उद्देश्यों का निर्धारण किया गया है।**
  - (1) जिले में विद्यमान उपलब्ध जल संसाधनों को प्रस्तुत करना।
  - (2) जिले की भौगोलिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करना।
  - (3) जल संसाधनों से सम्बन्धित आँकड़ों को प्रस्तुत करना।
  - (4) कृषि विकास ।
  - (5) जिले में उपलब्ध जल की गुणवत्ता का विवेचन करना।
  - (6) अध्ययन क्षेत्र के कृषि संसाधनों का स्थानीय प्रारूप प्रस्तुत कर मूल्यांकन करना।
  - (7) राज्य में विद्यमान जल संसाधनों व अध्ययन क्षेत्र के असंतुलन को दर्शाना या ज्ञात करना।
  - (8) उक्त वर्णित क्षेत्रों मेंनिकट भविष्य मेंजल की आवश्यकता व खपत की योजना तैयार करना।

अध्याय द्वितीय-

परिचय में राजस्थान के टोंक जिले का भौगोलिक परिचय, जल की महत्वता, उपयोगिता का वर्णन किया गया है एवं उपस्थित समस्याओं को दर्शाने का प्रयत्न किया गया है। शोध का मुख्य उ`श्य जल संसाधनों, भौगोलिक पृष्ठभूमि, जल संसाधनों के आँकड़े, जल की गुणवता, खपत, जल संसाधनो का स्थानीय प्रारूप कृषि के विकास का भौगोलिक अध्ययन है। जिन्हे प्रस्तुत शोध के विभिन्न निम्न अध्यायों में दर्शाया गयाहै।

अध्याय तृतीय - भौगोलिक पृष्ठभूमि (टोंक जिला) में टोंक जिले की भौगोलिक स्थिति, भूगर्भिक संरचना व उच्चावय, जलवायु, अपवाह तन्त्र, मिट्टीयाँ वनस्पति एवं भूमि उपयोग का विस्तृत वर्णन किया गया है एवं जलसंसाधनों पर इनके प्रभाव को भी दर्शाया गया है।

अध्याय चतुर्थ - जल संसाधन में जल की उपलब्धता का वर्णन, उपलब्ध स्त्रोतों का वर्णन, जल संसाधनों में जल की मात्रात्मक उपलब्धता एवं उपयोगानुसार विवरणात्मक वर्णन कर उनके संरक्षण के प्रारूप को भी दर्शाया गया है।

अध्याय पंचम - *कृषि एवं किसानों के विकास के लिए हर क्षेत्र की जलवायु व क्षेत्र में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए टोंक जिला स्तर पर कृषि के लिए अनेक जल योजनाएं तैयार कराई गई हैं। इससे किसानों का काफी फायदा मिले, क्योंकि राज्य में अलग-अलग इलाके में अलग-अलग तरीके के सिंचाई संसाधन हैं और वहाँ की जलवायु भी अलग-अलग हैं इसलिए जिला स्तर पर जल के लिए अनेक योजनाएं तैयार करने से किसानों को काफी फायदा भी मिल रहा है*

शोध प्रबन्ध की रूपरेखा

द्वितीय अध्याय	*1*	*भौतिक विभाजन एवं भौगोलिक स्थिति*	
	2	*भूगर्भिक संरचना व उच्चावच*	
	3	*जलवायु एवं तापमान*	
	4	*अपवाह तन्त्र*	
तृतीय अध्याय	*1*	*मिट्टीयॉ*	
	2	*वन एवं वनस्पति*	

चतुर्थ अध्याय	*1*	*जल संसाधन एवं अवधारणा*	
	2	*जल संसाधन क्षेत्र* 3. सतही जल संसाधन (वर्षा, नदियॉ ,बॉध एवं तालाब 4. भूमिगत जल संसाधन	
	3	*जल ग्रहण क्षेत्र* 1. जल ग्रहण सीमांकन 2. टोंक जिले में जल ग्रहण	
	4	*जलग्रहण विकास दिशा-निर्देश*	
पंचम अध्याय	*1*	*कृषि क्षेत्र*	
षष्ठम् अध्याय	*1*	*निष्कर्ष*	
	2	*सन्दर्भ ग्रन्थ सूची*	

अध्याय द्वितीय
भौगोलिक पृष्ठभूमि

भौतिक विभाजनः- टोंक जिले के उत्तर में जयपुर, उत्तर-पूर्व में दौसा, पूर्व में सवाई माधोपुर,दक्षिण-पूर्व में कोटा, दक्षिण में बून्दी, दक्षिण-पश्चिम में भीलवाड़ा तथा पश्चिम मेंअजमेर जिला स्थित है।यह जिला 25°41' व 26°34' उत्तरी अक्षांश तथा 75°07' से 76°19' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इसका क्षेत्रफल 7194.00 वर्ग किलोमीटर है। जिले का आकार पंतग अथवा सम-चतुर्भुज जैसा है, जिसके पूर्व एवं पश्चिमभाग अन्दर की ओर झुके हुए है। दक्षिणी-पूर्वी भाग सवाई माधोपुर व बून्दी जिले मेंबीच से बाहर निकला हुआ है। जो कोटा जिले के उत्तरी छोर को स्पर्श करता सालगता है। दक्षिणी-पश्चिमी भाग भीलवाड़ा जिले में चला गया है। यह जिला समुद्रतल से 264.32 मीटर की सामान्य ऊँचाई पर समतल बना हुआ है। यह बनास नदीद्वारा भी विभाजित है। यहाँ की भूमि उपजाऊ है, किन्तु रेतीली जैसी है और अद्योमृदा जल भी बहुत सीमित है। इसकी पहाड़ियाँ च ानी हैं किन्तु झाड़ियों सें युक्त है। यह पहाड़ियाँ अरावली श्रृंखला की है, इनकी ऊँचाई समुद्र तल से 409 मीटर से 605 मीटर के बीच है। इनकी एक श्रृंखला भीलवाड़ा जिले से आरम्भ होकर टोंक जिले में दक्षिण में राजकोट के निकट प्रवेश करती है, तथा उत्तर-पूर्व दिशा में सवाई माधोपुर जिले से होकर निरन्तर चली गई है।दूसरी श्रृँखला टोडाराय सिंह तहसील में तहसील मुख्यालय और राजमहल के मध्य स्थित है जहाँ बनास ने इस पहाड़ी को काट कर अपना बहावबनाया है। अध्ययन क्षेत्र का धरातल भौतिक दृष्टि से एक सा नहीं है। यहाँ कहीं पर नदियाँ हैं तो कहीं पर अर्द्धशुष्क है, कहीं पर मैदान तो कहीं पर पहाड़ी क्षेत्र भी पाये जाते हैं। अध्ययन क्षेत्र को तीन मुख्य तथा 13 उप भौतिक विभागों में विभाजित कियागया है।

खादर क्षेत्र :-

- बनास खादर :-इसके अर्न्तगत वह क्षेत्र आता है जिसमें बनास नदी का पानी प्रतिवर्ष वर्षाकेदौरान पहुंचता है। इसकी लम्बाई लगभग 500 कि.मी. तथा चौड़ाई लगभग 6किलोमीटर से 30 कि.मी. तक है। यह अध्ययन क्षेत्र का सबसे बड़ा भौतिक क्षेत्र है। यहाँ पर कृषि पैदावार अच्छी होती है तथा जनसंख्या बसाव अधिक है।
- सहोदरा खादर :-इस खादर क्षेत्र का द्वितीय स्थान है। इसकी लम्बाई 60 कि.मी. तथा चौड़ाई लगभग 8 कि.मी. तक है। इसका पश्चिमी भाग जिसके बीच में 400 मीटर की समोच्च रेखा गुजरती है, जो मालपुरा के पूर्वी भाग में स्थित है।
- **माशी बांडी खादर** :-मांशी खादर क्षेत्र अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी भाग में दो खण्डों में फैला हुआ है।इनके उत्तर में राहोली के आसपास बांड़ी खादर क्षेत्र फैला हुआ है। इनकी कुल लम्बाई 62 कि.मी. तथा चौड़ाई लगभग 6 कि.मी. से 22 कि.मी. तक है।
- **डील खादर**:- यह क्षेत्र उत्तर-पूर्व में स्थित है। इसकी आकृति त्रिभुजाकार है, जिसका आधा उत्तर की ओर तथा सिर दक्षिण की ओर है। इसकी कुल लम्बाई 24 कि.मी. व चौड़ाई लगभग 18 कि.मी. तक है।
- अन्य खादर :- यह खादर क्षेंत्र अध्ययन क्षेत्र के दक्षिण भाग मैं फैला हुआ हैं। यह छोटे अपवाह क्षेत्रों का भाग है।

बांगर क्षेत्र

- बनास बांगर :-यह क्षेत्र बनास नदी के दोनों ओर फैला हुआ तथा दक्षिण खादर क्षेत्र के साथ-साथ फैला है,एवं उत्तर में बनास के मध्य भाग तक फैला हुआ है।
- सहोदरा बांगर :-यह क्षेत्र उत्तर-पश्चिमी भाग मै फैला हुआ है।इसकी कुल लम्बाई लगभग 52 कि.मी. तथा चौड़ाई लगभग 6 से 22 कि.मी. तक है।
- मांशी व ढील बांगर :- यह क्षेत्र माशी खादर तथा ढूंढ खादर के मध्य में स्थित है। इसके मध्य में उत्तर-पूर्वी उच्च क्षेत्र स्थित है।इसकी लम्बाई लगभग 62 कि.मी. तथा चौड़ाई लगभग 6 से 30 कि.मी. तक है।

➢ **गलवानिया बांगर :-** यह क्षेत्र टोंक जिले के दक्षिणी-पूर्वी भाग में स्थित है तथा गलवानिया बांध का बांगर क्षेत्र है इसका खादर क्षेत्र बहुत कम है।

उच्च क्षेत्र तथा पहाड़ी क्षेत्र :- उच्च क्षेत्रों के अन्तर्गत वे क्षेत्र सम्मिलित किये गये हैं। जिनकी ऊँचाई 400 मीटर या इससे अधिक है। इस जिले की पहाड़ियों की ऊँचाई समुद्र तल से 409 मीटर से 605 मीटर के बीच में है। इस जिले का उच्च क्षेत्र (पहाड़ियाँ) अरावली श्रृंखला की है।**1. दक्षिणी उच्च क्षेत्र :-**उच्च क्षेत्रों की श्रेणी में यह सबसे बड़ा क्षेत्र है। इस क्षेत्र का विस्तार भीलवाड़ा जिले से आरम्भ होकर भीलवाड़ा और बून्दी की सीमाओं के पास से गुजरती हुई, टोंक जिले में दक्षिण में राजकोट के निकट प्रवेश करती है तथा बनेठा के निकट टोंक जिले को छोड़ने के बाद उत्तर पूर्वी दिशा में सवाई माधोपुर जिले से निरन्तर चली गई है। टोंक जिले में इसकी लम्बाई लगभग 45 कि.मी. तथा चौड़ाई 1 से 8 कि.मी. तक है। यह क्षेत्र दक्षिण में राजकोट गांव से उत्तर पूर्व में बनेठा तक विस्तृत है।
2. दक्षिणी-पश्चिमी उच्च क्षेत्र :-इस श्रेणी में बीसलपुर के आस-पास का पहाड़ी क्षेत्र आता है। इसकी लम्बाई लगभग 15 कि.मी. तथा चौड़ाई 2 से 4 कि.मी. तक है। यह क्षेत्र टोडारायसिंह तहसील मुख्यालय और राजमहल कस्बे के मध्य स्थित हैं। राजमहल कस्बे के निकट बनास ने इस पहाड़ी को काटकर अपना बहाव बनाया है।
3. उत्तर-पश्चिमी उच्च क्षेत्र:-यह क्षेत्र मालपुरा के पूर्वमें स्थित है। इसकी लम्बाई लगभग 14 कि.मी. व चौड़ाई 2 से 8 कि.मी. तक है।
4. उत्तर-पूर्वी उच्च क्षेत्र:-यह क्षेत्र निवाई के पास है। इसकी लम्बाई दक्षिण-पश्चिमी से उत्तर-पूर्व की ओर है। यह लम्बाई लगभग 6 कि.मी. तथा चौड़ाई लगभग 2 कि.मी. तक है।

भूगर्भिग संरचना व उच्चावच :-

अध्ययन क्षेत्र में दो प्रमुख भू-वैज्ञानिक रचनाएँ - अरावली क्रम व देवली क्रम है।
1. अरावली क्रम-इससे उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर जा रही तीन समानान्तर श्रृंखालाएँ हैं। पहली बौंली-आंवा मेखला है। जो बौंली में कुछ लाल से रंग की संधियुक्त व परिवर्तित स्फटिक शिलाओं पर पड़ी हुई अभ्रक की चट्टानों से बनी है। यह श्रृंखला दक्षिण-पश्चिम में बनास नदी तक चलती जा रही है और आगे अलवर तक चली गई है। दूसरी मेखला बौंली-आवां श्रेणी के समान्तर चलती हुई उत्तर-पश्चिम में थोड़ी दूरी पर है। दूनी पर पाया जाने वाला सुभाजा अत्यधिक स्फटिकमय है तथा इसमें रक्त-मणि का बाहुल्य है। तीसरी मेखला आगे उत्तर-पश्चिम में है तथा टोंक शहर में होकर जाती है। यह अभ्रक, सुभाजा व पुरानी स्फटिक शिलाओं के परिवर्तन से बनी है। ये मेखला निवाई और राजमहल पर पाई जाती है।
(ब) देवली क्रम :-इस संरचना में टोंक व जयपुर के बीच की अनेक पृथक्कृत पहाड़ियाँ आती है। निवाई में विशिष्ट अलवर-मेखला प्रचुर मात्रा में है। राजमहल में संहत स्फटिकाश्म की एक बड़ी पहाड़ी है जो गुलाबी से रंग की है तथा अलवर मेखला से मिलती जुलती है। इसी प्रकार की एक और सुस्पष्ट पहाड़ी चांदसेन में है।

2. उच्चावच :-अध्ययन क्षेत्र में समोच्च रेखाओं के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र के उत्तर पश्चिम में 360 मीटर की समोच्च रेखा गुजरती है तथा मध्य-पूर्व, दक्षिण-पूर्व में 260 मीटर की समोच्च रेखा गुजरती है। अधिकांश क्षेत्र में 300 मीटर की समोच्च रेखा फैली हुई है। कुछ भागों में 400 मीटर की समोच्च रेखाएँ भी स्थित है। अध्ययन क्षेत्र का सामान्य ढाल उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर है।

जलवायु-

जलवायु- किसी भी भू-भाग पर लम्बी अवधि के दौरान पाये जाने वाले तापमान, वायुदाब, वर्षा तथा पवनों आदि की औसत अवस्था जलवायु कहलाती है। किसी एक स्थान की जलवायु अथवा मौसम की दशाओं का अध्ययन करते समय एक से अधिक तत्वों पर विचार किया जाता है। यथा - अंक्षाश, समुद्र तल से ऊँचाई तथा प्रचलित स्थानीय पवन आदि। किसी प्रदेश को प्रभावित करने वाले कारकों में जलवायु एक प्रमुख कारक है। प्रदेश में पाई जाने वाली कृषि विविधता का स्वरूप वहां की जलवायु से प्रभावित होता है। प्रदेश में रहने वाली जनसंख्या पर प्रत्यक्ष रूप से जलवायु का प्रभाव उसके खान-पान, रहन-सहन आदि पर पड़ता है। प्रदेश की वनस्पति, मिट्टी, परिवहन के साधन आदि जलवायु को प्रभावित करते हैं। किसी प्रदेश का आर्थिक व सांस्कृतिक भू-दृश्य वहाँ पाई जाने वाली जलवायु पर निर्भर करता है। अतः क्षेत्रीय आर्थिक परिस्थितियों को जलवायु की उपज कहीं तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। इस क्षेत्र की जलवायु परिस्थितियाँ समग्र राजस्थान की जलवायु से समानता रखती है। राजस्थान राज्य

की जलवायु सामान्यत: विषम कही जाती है। क्योंकि तापमान में भारी अन्तर पाया जाता है। कर्क रेखा राजस्थान के दक्षिण से होकर गुजरती है, अत: राजस्थान राज्य लगभग पूर्णतया शीतोष्ण कटिबन्ध में स्थित है और समुद्र भी इस क्षेत्र से काफी दूर है। अरावली पर्वत श्रेणी राज्य में दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर फैली हुई है। यह राज्य के मध्य भाग में स्थित है जो दक्षिण-पश्चिमी मानसूनी हवाओं के समानान्तर है। अध्ययन क्षेत्र टोंक जिला सामान्यत: उष्णकटिबन्धीय, स्टेप्स, अर्द्धशुष्क तथा बीएसएच विशेषता वाला है, अत: यह अर्द्धशुष्क जलवायु प्रदेश में आता है अर्थात् यहाँ की जलवायु सामान्य रूप से अर्द्धशुष्क है।

- **ऋतुएँ :** - अध्ययन क्षेत्र की जलवायु का अध्ययन भी राजस्थान की जलवायु के समान ही

ऋतुओं के आधार पर किया गया है अध्ययन क्षेत्र की जलवायु को मुख्यत: तीन ऋतुओं में विभाजित किया गया है।

1. शीत ऋतु 2. ग्रीष्म ऋतु 3. वर्षा ऋतु

- **वर्षा:**- टोंक जिले में सात वर्षामापी स्थल हैं, जो कि टोंक देवली, मालपुरा, टोडारायसिंह, उनियारा, निवाई एवं पीपलू में स्थित हैं। जिले की औसत वर्षा 56.60 सेमी है। यहां औसत वर्षा भी नियमित नहीं है। सामान्यत: वर्षा अध्ययन क्षेत्र के दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम की ओर कम होती है तथा वार्षिक वर्षा की 93 प्रतिशत वर्षा जून से सितम्बर के बीच होती है, इनमें से जुलाई अगस्त महीने के अल्पकाल को छोड़कर यहाँ जलाधिक्य नगण्य होता है। यहाँ एक वर्ष में औसत 33 दिन वर्षा के होते हैं। जिले में औसत वार्षिक वर्षा 566 मि.मी है। गत 12 वर्षों के वर्षा संबंधी आँकड़ों का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि जिले में वर्ष 2012 में सबसे कम औसत वार्षिक वर्षा 359.71 मि.मी. हुई है। जबकि वर्ष 2015 में यह सर्वाधिक 745.28 मि.मी. थी। वर्ष 2017 में जिले में औसत वर्षा 562 मि.मी. हुई है। तहसीलवार अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि वर्ष 2017 में सबसे कम वर्षा पीपलू तहसील में 502.88 मि.मी. तथा सर्वाधिक टोंक तहसील में 756 मि.मी. हुई है। सामान्य वर्षा की दृष्टि से टोडारायसिंह तहसील मेंसर्वाधिक औसत वार्षिक वर्षा 602 12 एवं सबसे कम वार्षिक वर्षा (505.48 मि.मी.) निवाई तहसील क्षेत्र में रहती है।

- **तापमान** :-अध्ययन क्षेत्र की जलवायु का वितरण यहाँ की तथा पड़ौसी जिलों की

वैद्यशालाओं से प्राप्त आकड़ों से मिलता है। अध्ययन क्षेत्र में मध्य नवम्बर से दिन व रात दोनों का तापमान धीरे-धीरे गिरने लगता है तथा यह क्रम जनवरी तक चलता रहता है, जो सामान्यत: वर्ष का शीतलतम महीना होता है। अध्ययन क्षेत्र में विशेष रूप से जनवरी में पश्चिमी शीत बाधाओं की आवृति पर, शीतलहर के दिनों में न्यूनतम तापमान कभी-कभी पानी के हिमांक से एक अथवा दो डिग्री नीचे तक चला जाता है। तथा कभी कभी पाला भी पड़ता है। मार्च में तापमान तेजी से बढ़ने लगता है। सामान्यत: मई वर्ष का उष्णतम महीना होता है। आधे जून के बाद दक्षिणी-पश्चिमी मानसून के आगमन के कारण तापमान में गिरावट आ जाती है, किन्तु गर्मी से राहत महसूस नहीं होती है। क्योंकि हवा द्वारा उत्पन्न उमस से बेचैनी बढ़ जाती है। मानसून के बाद मध्य सितम्बर से अक्टूबर तक दिन क्रमश: कम गर्म होते जाते हैं और रातें अपेक्षाकृत ठण्डी होने लगती हैं। अक्टूबर के पश्चात् दिन व रात दोनों के तापमान में काफी गिरावट आ जाती है। केवल दक्षिणी-पश्चिमी मानसून के दिनों को छोड़कर जिले में शुष्क हवा चलती रहती है। तापमान भिन्नता आरेख संख्या 2.2(अ) से स्पष्ट होता है कि जिले में तीन वर्षीय औसत तापमान वर्ष 2008-2010 में सर्वाधिक तापमान मई महीने में 44.33 से रहा है एवं सर्वाधिक न्यूनतम औसत तापमान 7.46^o से. दिसम्बर महीने में रहा है। इन्हीं वर्षों में अधिकतम तापमान मई महीने में 41.16^o सेन्टीग्रेड तापमान रहा है। जबकि न्यूनतम तापमान 12.56^o सेन्टीग्रेड दिसम्बर महीने में रहा है। आरेख संख्या 2.2(ब) से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2012-2014 में सर्वाधिक तापमान 44.4^o सेन्टीग्रेड रहा है एवं न्यूनतम तापमान 9^o सेन्टीग्रेड रहा है। आरेख संख्या 2.2(स) स्पष्ट होता है कि वर्ष 2016-2017 में सर्वाधिक तापमान 45ण10ह सेन्टीग्रेड रहा है एवं न्यूनतम तापमान 9ण80ह सेन्टीग्रेड रहा है। उपरोक्त तीनों आरेख क्रमश: 2.2(अ), 2.2(ब) एवं 2.2(स) में सर्वाधिक औसत तापमान में लगभग समरूपता है। जबकि न्यून सर्वाधिक तापमान 2006-2008 से 7.46^o सेन्टीग्रेड रहा है एवं वर्ष 2012-2015 में समानता पाई गई है। आरेख द्वारा ज्ञात होता है कि अधिकतर वर्षों में सर्वाधिक औसत वार्षिक तापमान लगभग समान रहा है, जबकि सर्वाधिक औसत वार्षिक न्यूनतम तापमान में कमी एवं वृद्धि होती रही है।

- आर्द्रता: - जिले में मानसून काल अथवा वर्षा ऋतु (मध्य जून से लेकर मध्य अक्टूबर)में

औसत सापेक्ष आर्द्रता 76 से 79 प्रतिशत (वार्षिक औसत आर्द्रता 76.3 प्रतिशत)के बीच रहती है, जबकि ग्रीष्मकाल में विशेषकर मध्यान्तर में यह प्रतिशत गिरकर17 से 29 के बीच रह जाता है। शीतकाल में सापेक्षिक आर्द्रता उपरोक्त दोनों ऋतुओं के औसत प्रतिशत के बीच गिरता चढ़ता रहता है।

- मेघाच्छादन:- टोंक जिले में वर्षाकाल अथवा दक्षिण-पश्चिमी मानसून के दिनों में आसमान

में साधारण तथा मध्य में घने बादल छाये रहते हैं। वर्ष के शेष दिनों में आसमान लगभग साफ रहता है। शीतकाल में पश्चिमी विक्षोभ की आवृति के कारण आकाश में बादल छा जाते हैं।

6. हवाएँ:- अध्ययन क्षेत्र में हवाएं प्राय: हल्की से मध्यम गति की होती है। जो ग्रीष्म ऋतु व वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में थोड़ी तेज चलने लगती हैं। वर्षा ऋतु में पश्चिम से लेकर दक्षिण-पश्चिम में हल्की हवाएँ चलती हैं। जो मुख्यत: पश्चिम व उत्तर दिशाओं के मध्य, शान्त, धीमी गति से चलतीहैं। ग्रीष्म ऋतु में हवाओं का रूख दक्षिण-पश्चिम दिशाओं की ओर होता है।

7. **विशेष ऋतु प्रघटना** :-वर्षा ऋतु में दक्षिण-पश्चिम मानसून के अन्तर्गत बंगाल की खाड़ी में उत्पन्न होने वाले अवनमन कभी-कभी देश के मध्यवर्ती भागों से गुजरते हुए टोंक जिले में भी पहुँच जाते हैं, तब यहाँ तेज हवाओ के साथ घनघोर वर्षा होती है। इस दौरान गर्जन के साथ हवाएँ चलती रहती है। इनका आवर्तन ग्रीष्म व वर्षा काल में अधिक होता है। धूल भरी आँधियां चलती हैं।

अपवाह-तन्त्र

(अ) अपवाह-तन्त्र :-किसी क्षेत्र का अपवाह तन्त्र वहाँ के भौगोलिक तत्वों और स्थिति से प्रभावित होता है। इस क्षेत्र का अपवाह तन्त्र धरातलीय स्वरूप से विशेष प्रभावित है। अपवाह तन्त्र अन्य कारकों से भी प्रभावित है। राजस्थान अर्द्धशुष्क एवं शुष्क प्रदेश है। यहाँ पर वर्षा कम होती है, इसलिए वर्षभर बहने वाली नदियों की कमी है तथा नदियों में वर्षा के समय जल उपलब्ध रहता है, कुछ समय पश्चात् ये नदियाँ शुष्क हो जाती हैं। अध्ययन क्षेत्र टोंक जिले में बड़ी नदियों का उद्गम स्थान नहीं है। अध्ययन क्षेत्र के अपवाह तन्त्र को चार भागों में विभाजित किया गया है।(म.24)

1. **बनास अपवाह क्षेत्र** :-अध्ययन क्षेत्र के नदी और नाले बनास प्रणाली से सम्बद्ध हैं। बनास लगभग बारह मासी नदी है। यह नदी राजस्थान के उदयपुर जिले में कुम्भलगढ़ के पास अरावली पर्वतमाला से निकलकर पूर्व की ओर प्रवाहित होते हुए चितौड़गढ़ जिले के उत्तरी-पश्चिमी कोने से गुजरकर भीलवाड़ा जिले में प्रवेश करती है। इसके बाद अजमेर जिले में कुछ किलोमीटर बहने के पश्चात् देवली तहसीलान्तर्गत नेगड़िया गांव पर टोंक जिले में प्रवेश करती है, यह अध्ययन क्षेत्र को लगभग दो भागों में विभक्त करती है, तथा अध्ययन क्षेत्र के मध्य भाग से गुजरती हुई दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर बहती हुई टोंक शहर तक बहती है। तत्पश्चात् पूर्व की ओर मुड़ आती है और टोंक से लगभग 30 कि.मी. पूर्व की ओर बहने के बाद सवाई माधोपुर जिले में प्रवेश कर रामेश्वरम के पास चम्बल नदी में विलीन हो जाती है। इसकीकुल लम्बाई लगभग 400 कि.मी. है तथा अध्ययन क्षेत्र में यह लगभग 135 कि.मी बहती है तथा इसका कुल अपवाह क्षेत्र लगभग 47620 वर्ग कि.मी. है। यह अध्ययन क्षेत्र का मुख्य अपवाह तन्त्र है। इसकी सहायक नदियाँ मांशी, सहोदरा, खारी, व डाई इसमें आकर मिलती हैं। अध्ययन क्षेत्र में इसका अपवाह क्षेत्रफल लगभग 19838 वर्ग कि.मी. है। इस नदी के किनारे पर बसे महत्वपूर्ण गाँव- नेगड़िया, सोलंगपुरा, ककराज व श्योपुरी हैं। वर्षा के दिनो में इसका अपवाह क्षेत्र और विकसित हो जाता है। परन्तु ग्रीष्म ऋतु में अपवाह तन्त्र बहुत कम हो जाता है। पानी का प्रवाह धीमा होने के कारण मिट्टी का कटाव कम होता है। इस नदी पर कई सिंचाई परियोजनाएँ विकसित की जा रही हैं। जिनमें बीसलपुर बांध परियोजना मुख्य है।टोंक क्षेत्र के जल संसाधन के लिए बनास अपवाह क्षेत्र सबसे उपयुक्त साधन है। इसके समीपवर्ती क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व एवं मानव बसाव अधिक है, तथा कृषि अधिक विकसित हुई है। टोंक जिला मुख्यालय इसी के अन्तर्गत स्थित है

(ब) माशी अपवाह तन्त्र :- यह नदी अजमेर जिले में किशनगढ़ नगर के दक्षिण में लगभग 6 कि.मी. की दूरी पर स्थित सिलोरा पहाड़ियों से निकलकर पश्चिम से पूर्व की ओर जयपुर जिले में बहती हुई अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी पश्चिमी भाग में प्रवेश करती है तथा टोंक नगर के उत्तर में लगभग 6 कि.मी. की दूरी पर स्थित गहलोद गाँव के पास बनास में मिल जाती है। अध्ययन क्षेत्र में यह लगभग 28 कि.मी. की दूरी तय करती है तथा इसका अपवाह क्षेत्र लगभग 180 वर्ग कि.मी. है। इसके किनारे बसे महत्वपूर्ण गाँव - नगर डोरिया, पालड़ी, मंड़ावर, निमेहडा, गोकुलपुरा, हतूनिया, पीपलू, नाथड़ी व गलोद है।(स) सहोदरा अपवाह तन्त्र :- यह नदी अजमेर जिले के दक्षिण में 13 कि.मी. की दूरी पर स्थित अराई गांव से निकलकर पश्चिम से पूर्व की ओर बहती हुई टोंक शहर से लगभग 10 कि मी. उत्तर की ओर मांशी नदी में मिल जाती है।

टोंक जिले में इसकी कुल लम्बाई लगभग 76 कि.मी. तथा अपवाह क्षेत्र लगभग 13 वर्ग कि.मी. है। इसके किनारे पर बसे महत्वपूर्ण गाँव - लम्बा बड़ा, काटोली, हिंडोली, रायपुर, कुरेडा, और इंदिया है। यह नदी बरसात के दिनों मे प्रवाहित होती है अन्य दिनों में शुष्क रहती है, क्योंकि वर्षा कम होती है। इस नदी पर अध्ययन क्षेत्र का प्रमुख सिंचाई बांध टोरडी सागर है।

अन्य अपवाह तन्त्र :- खारी नदी अपवाह तन्त्र, डाई नदी अपवाह तन्त्र, बांडी नदी अपवाह तन्त्र,गलवा नदी अपवाह तन्त्र, अन्य अन्तः प्रवाही तन्त्र भी यहाँ पाये जाते हैं। खारी व डाई नगडिया के पास तथा दूसरी बीसलपुर के पास बनास नदी में मिल जाती है। बांडी नदी जयपुर की चौमू तहसील से निकलकर दक्षिण की ओर बहती हुई अध्ययन क्षेत्र में प्रवेश करके मांशी नदी में मिल जाती है। गलवा नदी बून्दी जिले से निकलकर टोंक जिले के दक्षिणी-पूर्वी क्षेत्र में बहती हुई सवाई माधोपुर के चौथ का बरवाड़ा पर बनास में मिल जाती है। अन्तः प्रवाह क्षेत्र के अन्तर्गत तालाब नदी नाले हैं जो मुख्य रूप से गांव - नया टोला, मालपुरा के पश्चिम तथा नीमला के दक्षिण में और सतवाड़ा गाँव के पास पाये जाते हैं।अपवाह बारंबारता वितरण :- बारंबारता का साधारण भाषा में अर्थ पुनरावृत्ति है। अध्ययन क्षेत्र में यह देखा गया है कि 1 वर्ग कि.मी. में कितनी संख्या में अपवाह तन्त्र प्रवाहित होते हैं।

तृतीय अध्याय

मिट्टियाँ :- भू-आकृति एवं मृदाओं के अभिलक्षणों की दृष्टि से इस जिले की मृदाओं में अनेकों विभिन्नताएँ हैं। उत्तर-पश्चिम भाग ऊँचे-ऊँचे रेतीले टीबों से ढका हुआ है, तो उत्तरी-पूर्वी भाग में मध्यम एवं ऊँचे दोनों तरह के रेतीले टीबे हैं। लेकिन दक्षिणी भाग अरावली से आई दोमट एवं भटियार मृदाओं से आच्छादित है। मृदाओं के विभिन्न लक्षणों के आधार पर जिले की मृदाओं को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

टोंक जिले में मिट्टियों के प्रकार, लक्षण एवं उनका वितरण -

1. जलोढ़-दुमट मटियार मृदाएँ एवं लक्षण -भूरे रंग की छिछली अथवा माध्यम गहराई, सतह पर साधारण केल्सीयम तथा सतह के नीचे गहरे भूरे रंग की केल्सीयमी क्षेत्र (पंचायत समिति) निवाई,पिपलू क्षेत्र सहित जिले के करीब 1017 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैली हुई है। 2 मृदा का प्रकार - साधारण टीबों युक्त बलुई मैदान मृदा का लक्षण - पीले भूरे रंग अथवा हल्के भूरे रंग की बारीक रेत वाली सतह के नीचे कमजोर कुंठित कोणीय संरचना वाली। क्षेत्र (पंचायत समिति)-मालपुरा,पीपलू क्षेत्र सहित जिले के करीब 1039वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैली हुई है।

2. पथरीली मृदाएँ एवं मृदा का लक्षण - पीला-भूरा अथवा भूरा रंग, कंकर-पत्थर युक्त, छिछली अथवा मध्यम गहराई, चूनायुक्त, असमतल स्थालाकृति तथा अपरदन से प्रभावित है। क्षेत्र (पंचायत समिति) - उनियारा क्षेत्र मै फैली हुई है।

3. टीबों के मध्य में बलुई मृदाएँ एवं मृदा का लक्षण - हल्के भूरे रंग की, छोटे-बड़े टीबों के बीच गहरी तथा चूना युक्त क्षेत्र (पंचायत समिति) - मालपुरा, टोडारायसिंह क्षेत्र में करीब 832 वर्ग किमी।

4. गहरी भूरी बलुई असमतल मृदाएँ एवं मृदा का लक्षण - रेतीली, कहीं-कहीं बलुई मुमट अकेल्सीयम, सतह पर पीले भूरे रंग की तथा सतह के नीचे भूरे एवं गहरे भूरे रंग की ऊपर से नीचे तक अबद्धकण, संरचनाहीन, अदृढ,

चिपचिपाहट रहित एवं सुपटताहीन। क्षेत्र (पंचायत समिति) – उनियारा, टोंक, निवाई क्षेत्र सहित जिले के करीब 1424 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैली हुई है।

5. भूरे रंग की बलुई दुमट मृदाएँ एवं मृदा का लक्षण – गहरी बारीक रेत के कण वाली चूर्ण शील, हल्की सी चिपचिपी, अकेल्सीयम तथा कहीं-कही साधारण केल्सीयम, असमतल धरातल युक्त एवं अपरदन से प्रभावित है। क्षेत्र (पंचायत समिति) – देवली, टोंक, पीपलू क्षेत्र सहित जिले के करीब 497 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैली हुई है।

6. दोमट लाल भूरी मृदाएँ एवं मृदा का लक्षण – लाल भूरे रंग लिए बारीक बलुई दुमट, मिश्रित संरचना युक्त क्षेत्र (पंचायत समिति) – टोडारायसिंह, टोंक क्षेत्र में करीब 1022 वर्ग कि.मी.

7. अन्य प्रकार की मृदाएँ एवं मृदा का लक्षण – पथरीली, छिछली पथरीली, पहाड़ी, कंकर-पत्थर युक्त मिट्टी क्षेत्र (पंचायत समिति) – 199 वर्ग कि.मी., 198 वर्ग कि.मी., 263 वर्ग कि.मी.,250 वर्ग कि.मी

वनस्पति एवं वन :– अध्ययन क्षेत्र टोंक जिले में पादप सम्पदा मुख्यतः शुष्क पर्णपाती है अर्थात् लगभग सभी वृक्ष सर्दी अथवा गर्मी में प्रतिवर्ष हरी पत्तियाँ गिरा देते हैं। पादपीय भूगोल के अनुसार भारत में पादपीय प्रदेशों की वनस्पति का विवरण चटर्जी (1939) ने दिया है जो सर्वमान्य व प्रचलित हैं। चटर्जी के वर्गीकरण के अनुसार टोंक जिले की वनस्पति गांगेय पादप प्रदेश में आती है। इस गांगेय पादप प्रदेश के पेड़-पौधे जो अध्ययन क्षेत्र में प्राप्त हैं, वे हैं – कूमटा, बबूल, अरूंज, धौंक, खेजड़ी, कैर, बेकल या ककेड़ा, पीलू, शीशम, सिरस, थोर और गांगन। अध्ययन क्षेत्र में वनों के विनाश एवं उनके त्रुटिपूर्ण दोहन के कारण अनेक पादप शनैः-शनै घटते जा रहे हैं। अध्ययन क्षेत्र में पिछले 60 वर्षों में पादपीय जैव विविधता में कमी आई है और वे संकटापन्न स्थिति में आते जा रहे हैं। इनमें प्रमुख हैं – अन्द्रोक, गूगल, बांस, अंजन, सालर, कडाया, गुमार, कूमटा एवं काला भांगरा।

वनः– अध्ययन क्षेत्र के समस्त क्षेत्रफल का लगभग 9.60 प्रतिशत क्षेत्र (2016-2017) वनों के अन्तर्गत है जिनमें जंगलात, स्थाई चारागाह तथा अन्य गोचर भूमि और वृक्षों के झुण्ड सम्मिलित किये गये हैं। यहां के वन शुष्क पर्णपाती हैं, जिनकी हरी पत्तियाँ सर्दी या गर्मी में आवश्यक झड़ती हैं। वन अधिकांशतया पहाड़ियों पर हैं। अध्ययन क्षेत्र पर वनों का फैलाव टोंक, सोयला, निवाई, ककोड़, राजमहल, नगर, आमली बनेठा, टोड़ारायसिंह और सिरस के निकट स्थित है। यहाँ पर धौंक या धौंकड़ा नामक पेड़ आमतौर पर पाये जाते हैं। अन्य वनस्पतियों में खैर कूमटा, अरूंज, बबूल, खेजड़ी या काबुली कीकर, कोलासी तथा शीशम आदि पाये जाते हैं। इसके साथ ही यहां ऊँचाई वाले भागों में सालर, खिरनी, बांस, आदि तथा कंटीली झाड़ियाँ, बेरी, थारे, नीम, पीपल, आम के पेड़ भी पाये जाते हैं। यहां पर पाई जाने वाली घासों में अपलूदा, सैन्चरस सिलियारिस, अरिसटिडा एवं सिम्बोपोगन ज्वानक्तसा मुख्य हैं। ये घासें मुख्यतया नदियों के खाद क्षेत्रों में अधिक मात्रा में पाई जाती है।वन एवं चारागाह क्षेत्र मानव क्रियाकलाप को प्रभावित करते हैं तथा मानवका जीवन स्तर इन पर बहुत आधारित है। प्राचीनकाल से मानव जन्म से मृत्यु तकवनों पर निर्भर रहा है।देश में वनों की देखभाल तथा सुरक्षा भारत सरकार का वन विभाग करताहै। सुरक्षा नियंत्रण तथा व्यवस्था की दृष्टि से भारतीय वनों को तीन श्रेणीयोंआरक्षित, संरक्षित तथा अवर्गीकृत में विभाजित किया गया है।

1. आरक्षित वर्ग :–इस प्रकार के वनों में पशु चराना तथा लकड़ी काटना वर्जित है, ऐसे वनोंके अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र का 101.41 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल है। भूसंरक्षण, बाढ़ की रोकथाम तथा वर्षा की अधिक प्राप्ति, जलस्तर का ऊँचा उठना आदि के साथ मरूस्थलीकरण को रोकने की दृष्टि से इन वनों का महत्वपूर्ण योगदान है।

2. अवर्गीकृत वन :–इस प्रकार के वन क्षेत्रों में पशु चराने तथा लकड़ी काटने पर सरकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं होता है। इन वनों के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र का 2.55 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल है। जो प्रमुखतया निवाई तहसील में है।

3. संरक्षित वन :–इस प्रकार के वन क्षेत्रों में सरकार द्वारा पशुचारण तथा लकड़ी काटने की अनुमति दी जाती है। इन वनों के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र का 228.18 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल है।जिले में वनों का प्रबन्धमण्डल वन अधिकारी के मार्गदर्शन में होता है।

चतुर्थ अध्याय

जल संसाधन

जलसंसाधनः- जल एक अतिमहत्वपूर्ण संसाधन है। जल ही जीवन है यह समस्त जीव के लिए एक अमूल्य संपदा है। इसका उपयोग न केवल पीने के पानी के रूप में होता है बल्कि इसके विविध उपयोग हैं। सम्पूर्ण जीव जगत के लिए जल उतना ही आवश्यक है जितना उनके लिए भोजन और वायु है। बिना जल के पृथ्वी पर जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है, जल प्रकृति का एक अद्भुत संसाधन है। आज तक पृथ्वी पर जितनी भी प्राचीन सभ्यताऐं विकसित हुई उनमें जल ही अमूल्य भागीदारी रही है, जल पृथ्वी पर पाया जाने वाला एक अमूल्य संसाधन है, जो प्रकृति की रचना में सहभागी होकर सम्पूर्ण जीवमण्डल कोआधार-प्रदान करता है। अतः इसका संरक्षण भी आवश्यक है। यह प्रकृति मेंविभिन्न स्थानों पर विभिन्न रूपों में वितरित है। हमारे देश में पिछले एक दशक सेघटते जल संसाधन एक ज्वलंतसमस्या के रूप में सामने आयी है। इस समस्या सेराजस्थान प्रदेश भी अछूता नहीं है। ऐसे समय में जल संसाधनों का समूचित उपयोग एवं संरक्षण करना आज की आवश्यकता ही नहीं बल्कि अनिवार्यता भी है। इस संदर्भ में जल संसाधन के अध्ययन का महत्व काफी सटीक प्रतीत हो रहा है। जिसका विकास नवीन है। इस अध्ययन की मूल विषयवस्तु जल की बढ़ती माँग से उत्पन्न जल संकट से निजात पाकर जल का पोषणीय उपयोग करना है।

जल संसाधन की अवधारणाः- भूगोल में बढ़ते विशेषीकरण के अन्तर्गत बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में संसाधनों के स्वतन्त्र अध्ययन को महत्व दिया गया है। मानव ने तकनीकी विकास द्वारा जल का विविध रूपों में उपयोग बढ़ाया है, जिसके कारण प्रकृति में उपलब्ध जल संसाधनों में मात्रात्मक एवं गुणात्मक अवनयन आया है। इसके मद्देनजर जल संसाधनों के वितरण उपयोग एवं सरक्षण के अध्ययन को महत्व देते हुए अमेरिकन संघ ने जल संसाधनों के अध्ययन को जल संसाधन भूगोल के रूपों में भूगोल की क्रमबद्व श्रृंखला में सम्मिलित कर स्वतंत्र शाखा के रूप में मान्यता दी गई है।

विश्व में जल संसाधान का अध्ययन प्राचीन काल से होता आया है। प्राचीन शास्त्रीय काल में यूनानी एवं रोमन भूगोलवेत्ताओं ने जल संसाधन के उपयोग एंव संरक्षण की विवेचना की थी। यह अध्ययन मध्यकाल तक सामान्य महत्व का रहा है क्योंकि इसकी उपलब्धता एवं संतुलन था, लेकिन पुर्नजागरण काल के दौरान खोजों एवं अन्वेषण का बड़ा दौर चला और विभिन्न देशों में जल संसाधनों की पहचान होने लगी तथा अट्ठारहवीं शताब्दी में धीरे-धीरे विश्व औद्योगिक क्रान्ति की तरह उन्मुख हुआ। फलस्वरूप उन्नीसवीं शताब्दी में सम्पूर्ण पृथ्वी पर जल संसाधन का अतिदोहन प्रारम्भ हुआ। बीसवीं शताब्दी में जब जल की बढ़ती माँग एवं घटती पूर्ति संघृत (Sustainable) आधार प्रदान करने के उद्देश्य से विश्व के विभिन्न देशों में पृथक विषय के रूप में अध्ययन किया जाने लगा है। अनेक पर्यावरणविद् जलीय उपलब्धता के कारण नीले ग्रह (Blue planet) के रूप में प्रसिद्ध पृथ्वी को संकटापन्न ग्रह (Endangered) कहने लगे हैं। उनका मानना है कि इस विश्वव्यापी जल संकट से पृथ्वी पर अनेक प्रजातियाँ विलुप्ति के कगार पर हैं। भारत में जल संसाधन वितरण उपयोग एवं प्रबन्धन पर अनेक विद्ववानों एवं संस्थानों ने कार्य किया लेकिन विशिष्ट रूप से परिभाषित न करके इसके विभिन्न पक्षों को ही परिभाषित किया। इस दृष्टि से दक्षिणामूर्ति (1972), नाग एवं कठपालिया (1972), के .एल.राव. (2009) सूरज भान, प्रो. लक्ष्मी शुक्ला एवं डॉं. पी. नाग के कार्य प्रमुख है। आर.के. गुर्जर व बी.सी. जाट द्वारा जल संसाधन अध्ययन को निम्न रूप में परिभाषित करने का प्रयास किया गया है- ‘‘जल संसाधन में पृथ्वी पर जल की प्रकृति, स्थानिक वितरण, उपयोग तथा संरक्षण का अध्ययन है। इसमें पृथ्वी के सभी मण्डलों, जलमण्डल, वायुमण्डल, स्थलमण्डल एवं जीवमण्डल में संचरित जलीय चक्र की सम्पूर्ण परिघटना को सम्मिलित किया गया है।’’ अतः स्पष्ट है कि जल संसाधनों के अध्ययन में जल की मात्रात्मक एवं गुणात्मक प्रकृति, पृथ्वी पर विभिन्न स्थानों पर विविध रूपों में (बर्फ, जलवाष्प एवं जल) वितरण तथा मानव द्वारा उपयोग के साथ ही इसके संरक्षण के अध्ययन को सम्मिलित करते हैं। इन सभी तथ्यों को एक समग्र श्रृंखला में संगठित करने का कार्य

जलीय चक्र करता है, जो मानव के लिए विभिन्न स्थानों पर जलीय उपलब्धता बनाये रखने के साथ ही जलीय सन्तुलन की भी एक कड़ी का कार्य करता है। जल एक प्राथमिक प्राकृतिक संसाधन है, जो कि एक मूल मानवीय जरूरत तथा एक अमूल्य राष्ट्रीय धरोहर है। जल दैनिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण है तथा यह प्रकृति में एक मुख्य यौगिक है। मनुष्य बगैर भोजन के 50-60 दिनों तक रह सकता है लेकिन बगैर पानी के मात्र 2 से 3 दिन ही जी सकता है। जिस जल का हम प्रयोग करते हैं वह गुणवत्ता तथा मात्रा में अनेक कार्यों के लिए पर्याप्त होना चाहिए, जैसे - निजी स्वास्थ्य से लेकर वृहत्त राष्ट्रीय जल परियोजनाओं के लिए। जल, भूमि तथा आकाश के बीच उस स्थान का अधिग्रहण करता है, जहाँ यह ऊर्जा का एक माध्यम है तथा स्थलमण्डल व वायुमण्डल को आकार प्रदान करता है। जनसंख्या में वृद्धि के कारण जल की महत्ता बढ़ गई है। जल की जरूरत पीने, निजी स्वास्थ्य, घरेलू उपयोगिता, सिंचाई, औद्योगिक जरूरतों, जल-बिजली संयंत्रों, परिवहन इत्यादि के लिए होती है। जलमण्डल में पृथ्वी के तीनों परिमण्डलों - स्थलमण्डल, जलमण्डल तथा वायुमण्डल में विद्यमान जल को सम्मिलित किया जाता है। सामान्यतः ऐसा प्रतीत होता है कि जलमण्डल में केवल महासागरों का ही जल सम्मिलित होता है, लेकिन वायुमण्डल में विद्यमान जलवाष्प आदि सभी मिलकर जलमण्डल की रचना में सहभागी होते हैं। वायुमण्डल में विद्यमान जलवाष्प की मात्रा अल्प होते हुए भी अत्यधिक महत्व रखती है, क्योंकि यही जलराशि जलमण्डल, वायुमण्डल तथा स्थलमण्डल में सम्पन्न जल की चक्रीय व्यवस्था को संयोजित करती है, जो महासागरों, झीलों, नदियों, हिमावरण से वाष्पीकरण तथा पादपों से वाष्पोत्सर्जन द्वारा वायुमण्डल में पहुँचकर पुनः वर्षा के रूप में विभिन्न जलस्त्रोतों में वितरित होता है। वर्तमान समय में विगत शताब्दी में प्रकृति के साथ की गई अनियोजित छेड़छाड़ के कारण जल का यह परिसंचरण प्रभावित हुआ है, जिस कारण भू-सतह पर वर्षा के रूप में इस जल के वितरण की प्रकृति एवं समय, दोनों में परिवर्तन आया है। इसके नूतन उदाहरण भारत में विगत चार वर्षों से प्रवृत्त सूखा तथा यूरोप में सन् 2002 में आयी बाढ़ है, जिसने ब्रिटेन से लेकर रोमानिया तक प्रभाव डाला है। जलमण्डल में लगभग 13,84,120,000 घन किलोमीटर जल विभिन्न दशाओं में पाया जाता है, जिसे सारणी संख्या 4.1 में दर्शाया गया है तथा इस सम्पूर्ण जल का 2.6 प्रतिशत भाग 36,02,000 घन किलोमीटर जल शुद्ध रूप में पाया जाता है, जो विभिन्न रूपों में पाया जाता है। जिसे सारणी संख्या 4.1 में दर्शाया गया है। सम्पूर्ण जल का सर्वाधिक भाग महासागरों में पाया जाता है, जो कि सम्पूर्ण जल का 97.39 प्रतिशत है तथा सम्पूर्ण शुद्ध जल (कुल जल का 2.6 प्रतिशत) का सर्वाधिक हिस्सा हिमटोपियाँ, हिमखण्ड, हिमनदों के रूप में व्याप्त है जो कि शुद्ध जल का 77.23 प्रतिशत है।

3. जल संसाधन क्षेत्र- प्रस्तुत अध्याय में टोंक जिले के जल संसाधनों के साथ-साथ जल ग्रहण क्षेत्रों को भी संरक्षित रूप में समाहित किया गया है।

जिसे मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा गया है।

1. सतही जल संसाधन 2. भूमिकत जल संसाधन।
1. सतही जल संसाधन :-पृथ्वी के धरातल पर जल राशि दो रूपों - स्थिर व गतिशील में पायी जाती है। स्थिर

जल राशि मुख्यतः महासागरों, झीलों, तालाबों में जबकि गतिशील जल राशि मुख्यतः नदियों में पायी जाती है। पृथ्वी पर विद्यमान जल राशि का मुख्य स्त्रोत वर्षा ही है।अध्ययन क्षेत्र टोंक जिले में सतही जल के मुख्य स्त्रोत वर्षा जल, तालाब,नदियाँ आदि है। जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

वर्षा जल :- पृथ्वी पर व्याप्त समस्त जल स्त्रोत का मुख्य स्त्रोत वर्षा ही है। वर्षा से हीविभिन्न जल स्त्रोतों में जल की प्राप्ति होती है। इसलिए वर्षा की मात्रा व उसके वितरण का अध्ययन आवश्यक होता है।

अध्ययन से ज्ञात होता है कि 1998 से 2017 तक के 20 वर्षों के दौरान जिले में सर्वाधिक वर्षा 2013 में 1181 मि.मी. दर्ज की गई, वही सबसे कम वर्षा 181 मि.मी. वर्ष 2002 में दर्ज की गई है। जिले में गत 20 वर्षों की औसत वर्षा (1998 से 2017 तक) 479.77 मि.मी. तथा गत 10 वर्षों की औसत वर्षा (2008 से 2017 तक) 418.77 मि.मी. है। सारणी 4.3 से ज्ञात होता है कि टोंक जिले की औसत वर्षा 568.24 मि.मी. है। तीन तहसीलों क्रमशः टोंक, निवाई, उनियारा, टोडारायसिंह में वर्षा जिले के औसत से अधिक है, जबकि मालपुरा, पिपलू, देवली तहसीलों में वर्षा जिले के औसत से कम है। टोंक तहसील में

वर्षा की मात्रा संगत है। अत: सारणी संख्या 4.3 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि जिले में वर्षा की मात्रा राजस्थान के अन्य जिलों की तुलना में संतोषप्रद है, लेकिन यह अथाह जलराशि बिना उचित प्रबन्ध के निर्बाधित गति से व्यर्थ बहकर नदियों में मिल रही है।

नदियाँ:–नदियाँ सतही जल संसाधन के प्रमुख स्त्रोत हैं। जिनके द्वारा विविध कार्यों हेतु जल की आपूर्ति होती है। टोंक जिलें की प्रमुख नदियों का विवरण इस प्रकार है।

1. बनास नदी :- बनास बारह मासी नदी है। यह नदी राजस्थान के उदयपुर जिले में कुम्भलगढ़ के पास अरावली पर्वतमाला से निकलकर पूर्व की ओर प्रवाहित होते हुए चितौडगढ़ जिले के उत्तरी-पश्चिमी कोने से गुजरकर भीलवाड़ा जिले में प्रवेश करती है, इसके बाद अजमेर जिले में कुछ किलोमीटर बहने के पश्चात् देवली तहसील अन्तर्गत नेगाड़िया गाँव पर टोंक जिले में प्रवेश करती है। यह अध्ययन क्षेत्र को लगभग दो भागों में दो विभक्त करती है तथा अध्ययन क्षेत्र के मध्य भाग से गुजरती हुई दक्षिण-पश्चिम से उत्तर पूर्व की ओर बहती हुई टोंक शहर तक बहती है। तत्पश्चात् पूर्व की ओर मुड़ जाती है और टोक से लगभग 30 किमी. पूर्व की ओर बहने के बाद सवाई माधोपुर जिले में प्रवेश कर रामेश्वर क पास चम्बल नदी में विलीन हो जाती है। इसकी कुल लम्बाई लगभग 400 किमी. है तथा अध्ययन क्षेत्र में यह लगभग 135 कि.मी. बहती है। इसका कुल अपवाह क्षेत्र लगभग 47620 वर्ग कि.मी. है। यह अध्ययन क्षेत्र का मुख्य अपवाह तन्त्र है। इसकी सहायक नदियाँ मांशी, सहोदरा, खारी व डाई इसमें आकार मिलती हैं। वर्षा के दिनों में इसका अपवाह क्षेत्र और विकसित हो जाता है। परन्तु ग्रीष्म ऋतु मे अपवाह तन्त्र कम हो जाता है। टोंक जिला मुख्यालय इसी नदी के किनारे स्थित है।

2. माशी नदी :–यह नदी अजमेर जिले में किशनगढ़ नगर के दक्षिण में लगभग 6 किमी की दूरी पर स्थित सिलोरा पहाड़ियों से निकलकर पश्चिम से पूर्व की ओर जयपुर जिले में बहती हुई अध्ययन क्षेत्र के उत्तरी-पश्चिमी भाग में प्रवेश करती है तथा टोंक नगर के उत्तर में लगभग 6 किमी की दूरी पर स्थित गहलोद् गाँव के पास बनास में मिल जाती है। अध्ययन क्षेत्र में यह लगभग 28 किमी. की दूरी तय करती हैं तथा इसका अपवाह क्षेत्र लगभग 180 वर्ग किमी है। इसके किनारे बसे महत्वपूर्ण गाँव, नगर, डोरिया, पालड़ी, मंडावर, निमेहड़ा, गोकुलपुरा, हतूनिया, पीपलू नाथड़ी व गहलोद है।

3. सहोदरा नदी :–यह नदी अजमेर जिले के दक्षिण में 13 किमी. की दूरी पर स्थित अराई गाँव से निकलकर पश्चिम से पूर्व की ओर बहती हुई टोंक शहर से लगभग 10 किमी उत्तर की ओर माशी नदी में मिल जाती है। अध्ययन क्षेत्र में इसकी कुल लम्बाई लगभग 76 किमी तथा अपवाह क्षेत्र लगभग 13 वर्ग किमी है। इसके किनारे पर बसे महत्वपूर्ण गाँव-लम्बा बड़ा, कांटोली, हिंडोली, रायपुरा, कुरेडा और इंदिया है। यहनदी बरसात के दिनों में प्रवाहित होती है। अन्य दिनों में शुष्क रहती है, क्योंकि वर्षा कम होती है। इस नदी पर अध्ययन क्षेत्र का प्रमुख सिंचाई बांध टोरड़ी सागर है।

4. अन्य अपवाह तन्त्र:- खारी नदी अपवाह तन्त्र, डाई नदी अपवाह तन्त्र, बांडी नदी, गलवा नदी तथा अन्य प्रवाही तन्त्र भी यहाँ पाये जाते हैं। खारी व डाई नदियाँ अजमेर से पूर्व की ओर बहती हुई अध्ययन क्षेत्र में प्रवेश करके पहली नेगड़िया के पास तथा दूसरी बीसलपुर के पास बनास नदी में मिल जाती है। बांडी नदी जयपुर की चौमू तहसील से निकलकर दक्षिण की ओर बहती हुई टोंक जिले में प्रवेश करके माशी नदी में मिल जाती है। गलवा नदी बून्दी जिले से निकलकर टोंक जिले के

दक्षिणी-पूर्वी क्षेत्र में बहती हुई सवाई माधोपुर के चौथ का बरवाड़ा पर बनास में मिल जाती है।

टोंक जिले के मुख्य बाँध/ तालाब

बीसलपुर बांध :-

हिमालय से भी प्राचीन अरावली पर्वत श्रृंखलाओं के बीच टोंक जिले के देवली तहसील के बीसलपुर गाँव के समीप बनास नदी पर बांध बनाकर बीसलपुर पेयजल आपूर्ति एवं सिचाई परियोजना का निर्माण किया गया है। बनास नदी राजस्थान की सबसे बड़ी चम्बल की प्रमुख सहायक नदी है जो दक्षिणी राज. के राजसमंद, चितौड़गढ़, भीलवाड़ा, टोंक एवं सवाई माधोपुर जिलों से बहती हुई यह नदी अन्ततः चम्बल नदी में मिल जाती है। इस नदी का कुल जलग्रहण क्षेत्र 48018 वर्ग कि.मी. है एवं बीसपुर बांध स्थल तक इसका कुल जलग्रहण क्षेत्र 27726 वर्ग किमी. है, जिसमें से 19701 वर्ग किमी. क्षेत्र को पूर्व में ही रोका जा चुका है। बीसलपुर बांध का निर्माण टोंक जिले की देवली तहसील के ग्राम बीसलपुर के पास बनास नदी पर वर्ष 1986-87 में शुरू किया था। बांध का गेज 310.05 आर. एल. मीटर दर्ज किया गया है। इसमें कुल 11.2 टी.एम.सी पानी का भराव है। बांध के जलभराव में कुल 212 वर्ग किमी. क्षेत्र है। इसमें कुल 21 हजार 800 हैक्टेयर भूमि डूब में आती है। बीसलपुर बांध की लम्बाई 574 मीटर तथा 39.5 मीटर ऊँचाई है।

-: बॉध का उद्देश्य :-

1. गांव के लोगो की पीने का पानी उपलब्ध करवाना था।
2. सिंचाई की सुविधाओं में सुधार लाना था।

तालाबः- भूमि का वह निचला हिस्सा जिसमें वर्षा का पानी आकर रूक जाता है, यामानव निर्मित वह गर्त जो पानी से भर जाता है, तालाब की संज्ञा से सम्बोधितकिया जाता है। क्षेत्र की भूमि की बनावट तालाब निर्माण का निर्धारण करती है।ऐसे क्षेत्र जहाँ पर नदियाँ वर्ष भर प्रवाहित नहीं होती है, केवल वर्षा काल मेंही जल की प्राप्ति होती है, वहाँ तालाबों का निर्माण कारगार सिद्ध होता है। वर्षाजल के संचयन के द्धारा इन तालाबों पर बाँध बनाकर जल का उपयोग विभिन्न कार्यों में किया जाता है।

जिले के प्रमुख तालाब :-

1. बनेठा का तालाब :- टोंक जिले में बनेठा क्षेत्र के सेदरी गांव के पास एक ऐसा चमत्कारी तालाब स्थित है जिसके पानी से नहाने से कैंसर कोढ़, लकवा जैसी गम्भीर बिमारियाँ भी दूर हो जाती है। इस तालाब से आस-पास के व्यक्ति इसी का पानी पीते है। वह सिंचाई के लिए, पेय जल के रूप में, पशओं के पीने के पानी आदि के लिए इसी के जल का उपयोग करते हैं। यह तालाब प्राचीन काल से स्थित है। इसे आस्था का महाकुम्भ भी कहते है।

2 चंदलाई :- चंदलाई एक गांव है, जो कि टोंक-कोटा मार्ग में टोंक जिले से 10 कि.मी की दूरी पर स्थित है। इसकी स्थापना चंदलाई नामक राजा ने की थी जो उससमय टोंक जिले का शासक था। उन्होने गांव के पास एक पक्का तालाब बनवायाथा, जिसका विवरण आज भी तालाब की दीवारों पर बने शिलालेखो बैसाख सूदी15 संवत् 1027(970 ई.) पर लिखा हुआ है। इसी कारण इस तालाब का नाम चंदलाई का तालाब रखा गया। वर्तमान समय में इस तालाब का पानी पेय जलएवं सिंचाई आदि के रूप में काम लिया जा रहा है।

2. भूमिगत जल संसाधनः- पृथ्वी के तीन चौथाई भाग में जल है, फिर भी पीने योग्य जल मात्र 2.50 प्रतिशत है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक आंकलन के अनुसार पृथ्वी के समस्त जल का मात्र 0.007 प्रतिशत ही मानव जीवन के उपयोग हेतु उपलब्ध है। बढ़ती हुई जनसंख्या,शहरीकरण तथा पेयजल, उद्योग, कृषि जैसे विभिन्न उपयोगों के लिए बढ़ती माँग के कारण स्वच्छ संसाधनों पर दबाव बढ़ रहा है। भू जल संसाधनों के अंधाधुधं दोहन के दुष्परिणाम :- भू जल स्तर में भारी गिरावट, कुओं, नलकूपों के सूखने, ऊर्जा उपयोग में वृद्धि तथा भूजल की गुणवता में

गिरावट के रूप में सामने आ रहे हैं।हमारे देश में पिछले एक दशक से घटते जल संसाधन एक ज्वलंत समस्या के रूप में सामने आये हैं।इस समस्या से हमारा राजस्थान राज्य भी अछूता नहींहै।ऐसे समय में जल संसाधनों का समुचित उपयोग एंव संरक्षण करना आज की आवश्यकता ही नहीं वरन् अनिवार्यता भी है।

जिले में भूजल संसाधन –सामान्य तौर पर ऐसा माना जाता है कि भूमि के नीचे पाताल में अथाह भूजल है, लेकिन यह एक भ्रम है। भूजल का एकमात्र स्रोत वर्षा जल है। जितनी वर्षा होती है, उसका 5 से 16 प्रतिशत जल ही धरती में पाया जाता है एवं हमें भू-जल के रूप में उपलब्ध होता है। चट्टानी क्षेत्र में तो भूमि के नीचे जाने वाले वर्षा जल की मात्रा 5 प्रतिशत से भी कम होती है।

भू-जल विज्ञान – जिले में भूजल संसाधन के तकनीकी सर्वेक्षण, आंकलन का कार्य 220 चयनित भूजल स्तर मापन केन्द्रों के माध्यम से किया जाता है। इनमें 180 स्थानों पर चयनित कुओं तथा 35 स्थानों पर पीजोमीटर के द्वारा मानसून पूर्व तथा मानसून पश्चात् भूजल स्तर मापन का कार्य किया जाता है। इसी के साथ भूजल नमूनों को इकट्ठा कर उनका रासायनिक विश्लेषण किया जाता है। जिले में एक भूजल मापन केन्द्र लगभग 30 वर्ग कि.मी. क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। जिले के भूजल भण्डार के हिसाब से भूजल इकाइयों का वर्गीकरण करने पर ज्ञात होता है कि आधे से अधिक लगभग 55 प्रतिशत क्षेत्र में विंध्य समूह के बालू पत्थर (Sandstone) 16 प्रतिशत क्षेत्र में चूना पत्थर (Limestone) तथा लगभग 10 प्रतिशत क्षेत्र में शैल पत्थर (Shale) पाया जाता है। जिले के 12 प्रतिशत लावा निर्मित आग्नेय चट्टान 'बेसाल्ट' (Basalt) का विस्तार है। जबकि मात्र 4 प्रतिशत क्षेत्र में ''नूतन मिट्टी'' (Alluvium) का फैलाव है। टोंक जिले की भूजल स्थिति –टोंक जिले का कुल क्षेत्रफल 7194 वर्ग कि.मी. है तथा औसत वार्षिक वर्षा 568.24 मिलीमीटर है। जिले में लगभग 495 मिलियन घन मीटर भूजल जमा होता है। जिले में 60% पेयजल योजनाएँ एवं सिंचाई कार्य भूजल पर आधारित है, सबसे अधिक पानी लगभग 80% कृषि में, 14% पेयजल व उद्योगों में शेष 6% अन्यगतिविधियों में खर्च होता है।

1. अध्ययन क्षेत्र में 1986 में औसत भूजल स्तर 6.8 मीटर गहराई पर था जो वर्तमान समय में गिरकर लगभग 12.76 मीटर हो गया है।

2. अध्ययन क्षेत्र में 1994 में भूजल दोहन 21.65% था जो वर्तमान में बढ़कर 94% से भी अधिक हो गया है।

3. अध्ययन क्षेत्र में 2009 में भूजल की कुल उपलब्ध मात्रा 498 मिलियन घनमीटर थी जो वर्तमान में घटकर 496 मिलियन घनमीटर रह गया है।

4. जिले में अधिक भूजल दोहन के कारण इसे विषम श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है।

5. जिले का भूजल भण्डार लगभग 496 मिलियन घनमीटर है, जिसके विरूद्ध 477 मिलियन घनमीटर भूजल का दोहन किया जा रहा है।

1. जिले में भूजल दोहन की गति यदि यही रही तो भूजल का भण्डार संभवत:वर्ष 2025 तक समाप्त हो जायेगा, जिससे न केवल सिंचाई अपितु पीने हेतुभी पानी की भयंकर कमी आ जायेगी।

2. जिले में भूजल स्तर की स्थिति - जिले में 1986 में औसत भूजल स्तर 6.7 मीटर था जो 2005 में 11.35 मीटरहो गया। परन्तु जनसंरक्षण हेतु जन जागृति एवं औसत वर्षा में सुधार केफलस्वरूप अतितीव्र गिरावट में सुधार होकर 2017 में 6.90 मीटर रह गया। जिसकामुख्य कारण उस वर्ष वर्षा में कमी तथा भूजल का अतिदोहन था। 2009 के पश्चात्कुछ प्रयासों के फलस्वरूप कुछ सुधार के पश्चात् निरन्तर गिरावट दर्ज है। पिछले10 वर्षों के आँकड़ों पर दृष्टि डालने परयह स्पष्ट होता है कि जिले में औसत भूजल स्तर मे निरन्तर कमी हो रही है,जिसकी दर 1.43 मीटर वार्षिक से भी अधिक है।

जल ग्रहण क्षेत्र :- जल ग्रहण वह भौगोलिक इकाई क्षेत्र होता है, जिसमें गिरने वाला जल एक नदी या एक दूसरे से जुड़ती हुई कई छोटी नदियों के माध्यम से एकत्रित होकर एक स्थान से होकर बहता है। इस स्थान को निर्गम या जल निकास बिन्दु कहते हैं। इस प्रकार यह जल भूमि का वह क्षेत्र है, जिसका समस्त अपवहन जल (Run

off) एक ही बिन्दू से होकर गुजरता है इसमें प्राप्त समस्त वर्षा जल का नियन्त्रण संभव हो पाता है।

डॉ. महनोत के अनुसार:- एक जल ग्रहण क्षेत्र वह होता है, जिसमें से सम्पूर्ण वर्षा का जल एक ही बिन्दु से प्रवाहित होता है। डॉ. महनोत ने इसे ''केचमेण्ट एरिया'' तथा अपवाह बैसिन'' के समानार्थीमाना है। ''डॉ. राजीव (वरिष्ठ वैज्ञानिक आई.सी.ए.आर.) ''जलग्रहण क्षेत्र का मतलबहै, भूमि का वह भाग जिसका जल निकास एक स्थान से होता है। आमतौर पर इसेकैचमेण्ट भी कहते हैं।''

जलग्रहण विकास दिशा-निर्देशिका (ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार):-

जलग्रहण क्षेत्र जमीन की ऐसी जिओहाइड्रोनिकल इकाई है, जिसका जल निकास एक बिन्दु पर होता है। आर.सी. एल.मीणा ने अपनी पुस्तक जलग्रहण का अविरत निकास में जलग्रहण को इस प्रकार परिभाषित किया है- जलग्रहण वह क्षेत्र है, जिस पर बरसने वाला वर्षा का पानी बहकर उस क्षेत्रके एक स्थान से बाहर निकलता है। इस प्रकार से जलग्रहण एक जल वैज्ञानिकईकाई है, जिसमें भूमि क्षेत्र के साथ-साथ जलक्षेत्र भी सम्मिलित होता है। जलग्रहण की सीमाएँ अपवाहन विभाजन या जल विभाजक के रूप में जानी जाती है। यहाँ से वर्षा गिरने पर वह विभिन्न जलग्रहण क्षेत्रों में जाती है। इस प्रकार ये एक तरह से पदानुक्रमिक सरिताएँ होती हैं, जिन्हे वृहद् जलग्रहण एवं सूक्षम जलग्रहण कहा जाता है। अखिल भारतीय मृदा एवं भूमि उपयोग सर्वेक्षण ने क्रमिक रूप से राष्ट्रीय स्तर पर जलग्रहण क्षेत्रों का सीमांकन कर पाँच पदानुक्रमिक वर्ग निर्धारित किये हैं।

1.प्रदेश 2.बेसिन 3. जलागम 4.उप-जलागम 5.जलग्रहण।

जलग्रहण का उपयुक्त आकार एक नियोजन इकाई के रूप में 500 से 1000 हेक्टेयर माना गया है। सन् 1994 में प्रो. हनुमंत राव समिति की फिारिश में एक आदर्श जलग्रहण क्षेत्र का आकार 500 हेक्टेयर बताया गया था, जिसका अनुसरण आज भी किया जा रहा है। 500 हैक्टेयर को नियोजन की इकाई मानकर उसमें पोषणीय विकास का ढाँचा तैयार किया जाता है। जिस हेतु भौतिक एवं पारिस्थितिकीय पुनर्भरण के उपाय किये जाते हैं। इस प्रकार जलग्रण क्षेत्र एक ऐसी भौगोलिक इकाई के रूप में परिभाषित हो चुका है, जिसमें विभिन्न भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक क्रियाकलापों द्वारा स्थायी विकास का आधार तैयार किया जाता है। साथ ही संसाधन विकास एवं प्रबन्धन की संकल्पना भी सिद्ध होती है।

अरावली जलग्रहण कार्यक्रम परियोजना सार - ''आप किसी नदी/नाले पर खड़े हो तो वह पूरा क्षेत्र, जिसका पानी बहकर वहाँ से निकलता हो, वह क्षेत्र जलग्रहण क्षेत्र कहलाएगा। जलग्रहण में पहाड़, खेत, रास्ते, छोटे-छोटे नाले सभी आते हैं। अतः जलग्रहण क्षेत्र विकास कार्यक्रम पूरे क्षेत्र के विकास का कार्यक्रम है।''

यदि ग्रामीण संदर्भ में इसे परिभाषित करना हो तो जलग्रहण कार्यक्रम ग्रामीण समाज का, ग्रामीण समाज द्वारा एवं ग्रामीण समाज के लिए चलाया जाने वाला कार्यक्रम है। जिससे सरकारी तन्त्र की भागीदारी सहयोगी, समन्वयक तथा उत्प्रेरक हो। वहीं यदि इसे जल के संदर्भ में परिभाषित करना हो तो जलग्रहण क्षेत्र भूमि की एक ऐसी इकाई है, जिसका जल निकास एक ही बिन्दु/सान से होता है। यह क्षेत्र कुछ हेक्टेयर से लेकर कई किलोमीटर का हो सकता है। जलग्रहण क्षेत्र ही ग्रामीण विकास कार्यक्रम की नई इकाई है, जिसका केन्द्र बिन्दु ग्रामीण समाज है। इस कार्यक्रम की कार्यप्रणाली के अन्तर्गत योजना का उदय, विकास की सबसे छोटी इकाई अर्थात् गाँव से होता है। इस कार्यक्रम के प्रमुख तत्वों में सामुदायिक संगठन एवं प्रशिक्षण, जनसहभागिता, कृषि योग्य भूमि पर संरक्षण एवं उत्पादन पद्धतियाँ, अकृषि योग्य भूमि पर संरक्षण एवं उत्पादन पद्धतियाँ, नाला उपचार, पशुधन विकास, नर्सरी विकास, आय-वृद्धि हेतु अन्य घरेलू पद्धतियों कोरखा गया है। जनसहभागिता एवं तकनीकी ज्ञान जलग्रहण विकास के दो प्रमुख स्तम्भ हैं, जिनके मध्य सामंजय होना अत्यन्त आवश्यक है। कईं बार विकास कार्यों में लगी संस्थाएँ दोनों पहलुओं पर पूरा ध्यान नहीं दे पाती है, जिसके फलस्वरूप विकास की गति प्रभावित होती है। विभिन्न योजनाओं का निर्धारण, इनका क्रियान्वयन स्थानीय लोगों को विश्वास में लेकर उनके साथ विचार-विमर्श के पश्चात् किया जाता है। स्थानीय लोगों को विकास संबंधी विभिन्न मुद्दों की जानकारी दी जाती है एवं संसाधनों के बेहतर उपयोग के लिए जागरूक बनाया जाता है। साथ ही स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से विकास की दिशा निर्धारित की जाती है।

जलग्रहण क्षेत्र का सीमांकन – प्रत्येक जलग्रहण क्षेत्र किसी न किसी जलधारा से जुड़ा होता है और इसे प्रायः उसी जलधारा के नाम से जाना जाता है। वह समस्त जलक्षेत्र जो इस जलधारा को पोषित करता है, जलग्रहण की सीमा में आता है। जलधारा के चारों ओर के क्षेत्र में ऊँचे स्थानों व पहाड़ियों को मिलाने वाली रेखा साधारणतः जलग्रहण की सीमा का निर्धारण करती है। निश्चित श्रेणी का हर जलग्रहण क्षेत्र एक विशिष्ट स्थान घेरता है। अतः कोई भी स्थान एक ही श्रेणी के दो या अधिक जलग्रहण की सीमा में नहीं आ सकता है। जलग्रहण विकास कार्यक्रमों को आरम्भ करने से पहले जलग्रहण क्षेत्र की समस्याओं का निर्धारण अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए निम्न कार्य सहायक होंगे – सर्वप्रथम भारतीय सर्वेक्षण विभाग के स्थलाकृतिक मानचित्र में संबंधित जलग्रहण क्षेत्र को ढूँढना। – इस क्षेत्र की जलधाराओं का अध्ययन कर ऐसा स्थान ढूँढना है जहाँ से होकर संबंधित जलग्रहण क्षेत्र का समस्त जल बाहर जाता है एवं उच्च श्रेणी की जलधारा को पोषित करता है। – स्थलाकृतिक मानचित्र की सहायता से चुने हुए क्षेत्र के चारों ओर ऐसे ऊँचे बिन्दुओं की पहचान करना है, जिनके दूसरी ओर का पानी बहकर संबंधित जलधारा में न आये। – इन बिन्दुओं को मिलाने पर उस जलग्रहण क्षेत्र की सीमाएँ मिलेंगी, जिसमें हम कार्य कर रहे हैं। – अगर इच्छित क्षेत्र पूरी तरह से संबंधित जलग्रहण क्षेत्र में नहीं आता, तो इससे उच्च श्रेणी का जलग्रहण बनायें। – यदि किसी मुख्य नदी के दोनों ओर कई छोटे जलग्रहण क्षेत्र बनाने के बाद भी कुछ क्षेत्र किसी भी जलग्रहण क्षेत्र की सीमाओं में नहीं आते हैं तो ये क्षेत्र इस नदी के वृहद जलग्रहण क्षेत्र में आयेंगे। जलग्रहण क्षेत्र विकास कार्यक्रम का प्रारम्भ – देश में पंचवर्षीय योजनाकाल में छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85) के समय कृषि व भू-संरक्षण विभाग द्वारा इस योजना का सूत्रपात वर्षा आधारित क्षेत्रों में जल संरक्षण व जल संचयन के लिए 15 राज्यों के 19 जलग्रहण क्षेत्र में किया गया। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य जल संरक्षण व जल संचयन करना था। राजस्थान में इस योजना का प्रारम्भ 1986–87 से हुआ। उस समय 8.43 लाख रूपये की लागत से 1330 हैक्टेयर क्षेत्र उपचारित किया गया है। वर्तमान में 2007–08 तक 3428847 लैक्टेयर क्षेत्र उपचारित किया जा चुका है।

टोंक जिले में जलग्रहण क्षेत्र –टोंक जिला जलवायविक दृष्टि से एक अर्द्धउष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र है, यहाँ औसत वर्षा 568.24 मिलीमीटर होती है। टोंक जिले की अधिकांश नदियाँ बरसाती हैं। अतः उनमें जलप्रवाह केवल वर्षा ऋतु के समय ही हो पाता है और शेष समय वे प्रायः सूखी ही रहती हैं। अतः टोंक जिले में वर्षा जल को संचित कर उसे विभिन्न कार्यों में उपयोग हेतु जलग्रहण क्षेत्र विकास कार्यक्रम एक आशा के नवांकुर के रूप में प्रस्फुटित हो सकता है, जिसके द्वारा क्षेत्र की प्रगति संभव है।

टोंक जिले में जलग्रहण विकास कार्यक्रम आई.डब्ल्यू.डी.पी., एन.डब्ल्यू.डी.पीआर.ए. व ई.ए.पी. (IWDP, NWDPRA, EAP) के अन्तर्गत आते हैं। टोंक जिले की कुल सात पंचायत समितियाँ टोंक, देवली, निवाई, उनियारा, मालपुरा, टोडारायसिंह, पीपलू में कुल 24 कलस्टरों को 331 मेक्रो जलग्रहण क्षेत्रों में विभाजित किया गया है, जिसमें जलग्रहण क्षेत्र विकास कार्य संचालित किये जा रहे हैं। इसके अन्तर्गत जिले के कुल 717958 हेक्टेयर क्षेत्र को उपचारित किया जा रहा है। सर्वाधिक जलग्रहण क्षेत्र का क्षेत्रफल मालपुरा पंचायत समिति के अन्तर्गत 148388 हेक्टेयर है, जहाँ 6 कलस्टरों में 72 मेक्रो क्षेत्र संचालित हैं। जबकि न्यूनतम जलग्रहण क्षेत्र 1 कलस्टर में 20 मेक्रो क्षेत्र सहित टोंक पंचायत समिति में विद्यमान हैं। इन जलग्रहण क्षेत्रों में से कई जलग्रहण क्षेत्रों में विकास कार्य पूर्ण हो चुके हैं और अधिकांश जलग्रहण क्षेत्रों में यह कार्य प्रगतिशील है। जलग्रहण क्षेत्रों की गतिविधियों के फलस्वरूप क्षेत्र में विकास की गंगा प्रवाहित होने लगी है।

संदर्भ ग्रन्थ :-

1- Bergman, E.F. and Renwick, W.H. (1999), "Introduction to Geography", Prentice Hall, P.4

2- Blue Gold the fight to stop the corporate theft of the World's Water", Left Word Books India, P. 25, 26

3- जाट, बी.सी. (2000), न्यू संस्करण, ''जलग्रहण प्रबन्ध'', पोइन्टर पब्लिशर्स, पृ. सं. 14, 15

4- गुर्जर, राजकुमार एवं बी.सी. जाट (2017), न्यू संस्करण, ''जल संसाधन भूगोल'', रावत पब्लिकेशन, पृ. सं. 10

पंचम अध्याय
कृषि क्षेत्र

कृषि क्षेत्र में जल का उपभोग :-कृषि एवं किसानों के विकास के लिए हर क्षेत्र की जलवायु व क्षेत्र में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए टोंक जिला स्तर पर कृषि के लिए अनेक जल योजनाऐं तैयार कराई गई हैं। इससे किसानों का काफी फायदा मिले, क्योंकि राज्य में अलग-अलग इलाके में अलग-अलग तरीके के सिंचाई संसाधन हैं और वहाँ की जलवायु भी अलग-अलग हैं इसलिए जिला स्तर पर जल के लिए अनेक योजनाऐं तैयार करने से किसानों को काफी फायदा भी मिल रहा है। राज्य में वर्षा जल को संग्रहित कर संरक्षित जल से फसलें प्राप्त कर रहे हैं। पेयजल भी उलब्ध हो सके, इसके लिए जल संग्रहण ढांचा का भी निर्माण करवाया जा रहा है। अध्ययन क्षेत्र टोंक जिले में सिंचाई सुविधा हेतु मुख्य नदियाँ बनास, मांसी, सहोदर, गलवा बाड़ी, डील व खारी खुशी हैं। इसके अलावा कुएं, नहरें, तालाब, नलकूप, बांध आदि से सिंचाई की जाती है। सिंचाई खण्ड टोंक के अधीन सिंचाई क्षमतानुसार बांधों का विकास निम्नानुसार किया गया है।

- 2500 एकड़ से अधिक सिंचाई क्षमता वाले बांधों में मांशी, गलवा, गलवानिया,चाँदसेन, टोरड़ी सागर तथा मोती सागर हैं।

- 1001 से 2499 एकड़ सिंचाई क्षमता वाले बांधों में चन्दलाई दाखिया, दौलतसागर, पनवाड़, थाँवला, किरावत सागर, राम सागर, लाम्बा हरिसिंह, धारेड़ा सागर, शहोदरा एवं श्योदानपुरा हैं।
- 501 से 1000 एकड़ सिंचाई क्षमता वाले बांध माधोलाव, बिडोली, दूनी सागर, नसिरदा, मानसागर अरनिया, मोहम्मदगढ़, सूंथड़ा, भानपुरा, कुम्हारिया, ठीकरिया, काली डूंगरी, भावलपुरा केरावालिया, नागफनी, ढीबरू सागर, रामसागर गनवार, हालोलाव कलमण्डा तथा बोटून्दा है।184 कृषि क्षेत्र में जल का उपभोग बाधों से :-

कृषि एवं किसानों के विकास हेतु सिंचाई खण्ड टोंक के अधीन उक्त बाधों को तहसीलवार निम्न दर्शाया गया है।

टोंक जिले में तहसीलवार सिंचाई खण्ड टोंक के अधीन बांध (2016-17)

क्र.सं.	तहसील	बांध
1.	टोंक	1. दाखिया, 2. चन्दलाई
2.	पीपलू	1. दौलत सागर
3.	निवाई	1. मांशी, 2. बिडोली, 3. माधोलाव
4.	मालपुरा	1. हालोलाव कलमण्डा, 2. चांदसेन, 3. थावला, 4. भावलपुरा केरवालया 5. रामसागर गनवार, 6. टोरडी सागर, 7. रामसागर लाम्बा हरिसिंह
5.	टोडारायसिंह	1. गलवा सागर, 2. सहोदरा, 3. धारेडा सागर, 4. बोटून्दा, 5. ढीबरू सागर
6.	देवली	1. मानसागर अरनिया, 2. पनवाड़ सागर, 3. दूनी सागर, 4. संग्राम सागर निवारिया 5. नसिरदा 6. मोती सागर
7.	उनियारा	1. गलवा, 2. गलवानियाँ, 3. श्योदानपुरा, 4. ठीकरियां, 5. भानपुरा, 6. मोहम्मदगढ़, 7. सूथंड़ा, 8. दूदी सागर, 9. कुम्हारियाँ आदि

स्त्रोत– कार्यालय जिलाधीश (भू.अ.) टोंक एवं क्षेत्रीय सिंचाई कार्यालय

नहरें :- नहरों के द्वारा जल के पुनर्वितरण के साथ ही टोंक जिले में सिंचाई का प्रमुख साधन है। ये कृत्रिम नदियाँ के रूप में विकसित की जाती हैं।

2. भू जल का विवेकपूर्ण उपयोग :- भूजल का सन्तुलन विवेकपूर्ण दोहन एवं वर्षा की पर्याप्त उपलब्धता पर निर्भर करता है। टोंक जिले में सिंचित भूमि में 39 प्रतिशत एवं नगरों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में भूजल से जलापूर्ति होती है। जलीय प्रवाह को विभिन्न स्थानों पर नियंत्रित करके कृत्रिम पुनर्भरण व्यवस्था को भी मजबूत बनाया जाना चाहिए।

3. जल ग्रहण विकास कार्यक्रम :-जल ग्रहण वह भौगोलिक क्षेत्र है, जिसमें गिरने वाला जल एक नदी या एक-दूसरे से जुड़ती हुई कई छोटी नदियों के माध्यम से एकत्रित होकर एक ही

स्थान से बहता है। जल ग्रहण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्न रूपों में जल संरक्षण किया जाता है-

1. वर्षा जल का वैज्ञानिक उपयोग।

2. शुष्क कृषि का विकास करना।

3. वर्षा पोषित (Rainfed) क्षेत्रों में नवीनतम सिंचाई पद्धतियों को अपनाना।

4. भूजल के पुनर्भरण की गति में वृद्धि करना।

5. सुविधाजनक स्थानों पर विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संरक्षणात्मक गति विधियों को अपनाते हुए जलाशयों का निर्माण करना।

6. वर्षा जल द्वारा हो रहे अपरदन पर रोक लगाने के लिए रोक बांधों (बीमबा कंडे) में जल का संग्रह कर प्रवाह को नियंत्रित करना।

कृषि में जल संरक्षण :-

मुख्यतया सिंचाई की दो विधियाँ है -

1. परम्परागत सिंचाई विधियाँ

2. कृषि में जल संरक्षण के वैज्ञानिक तरीके।

(1) परम्परागत सिंचाई विधियाँ :-

(अ) पट्टीदार सिंचाई विधि :-

पर्ि यों का निर्माण ढाल के अनुसार किया जाता है। पानी का स्त्रोत खेत के सबसे ऊँचे भाग में स्थित होता है। जहां से पूरे खेत में जल प्रवाहित होता है। इस विधि में भी कम व्यय के साथ अधिक क्षेत्र की सिंचाई सम्भव है।

(ब) क्यारी सिंचाई विधि :-क्यारियों को धोरे (एक छोटा नालीनुमा जल प्रवाह रास्ता) जिसके दोनों ओर मि ी की डोली से जोड़ देते हैं।

(स) खूड़ सिंचाई विधि :-फसलें पक्तियों में उगाई जाती है वहां खूड़ विधि अपनाई जाती है। इन फसलों की पंक्तियों के सहारे डोल बना दिये जाते है, तथा प्रत्येक दो डोलों के मध्य खूड़ बनाया जाता है जिसके अन्तर्गत पानी प्रवाहित करके सिंचाई की जाती है।

(द) अन्य विधियाँ :- बैलों की जोड़ी से चड़स खींचकर तो कहीं रहट से पानी निकाला जाता है। कहीं पर ढ़ेकली से भी सिंचाई होती है।

(2) कृषि में जल संरक्षण के वैज्ञानिक तरीके :-

1. प ीदार खेती :-समस्त कृषि क्रियाएँ ढाल के विपरित जुताई, बुवाई आदि सम्मोच्य रेखा पर करनी चाहिए, ऐसा करने से पानी का तेज बहाव रूकता है।

2. बूंद-बूंद फव्वारा सिंचाई पद्धति अपनाना :-

ड्रिप सिंचाई पद्धति एवं फव्वारा सिंचाई पद्धति से सिंचित जल की 50 प्रतिशत बचत की जा सकती है।

1. पलवार (मल्चिंग) जमीन को आच्छादन करने से 30 से 40 मिलीमीटर नमी अधिक मिलती है नमी की हानि कम होती है।

2. सोपान वेदिकाएँ :-जहाँ ढलान 6 प्रतिशत से अधिक होती है दो सीड़ियों के बीच के भाग को कम से कम 2 : 1 ढाल देना चाहिए।
3. बांध और डोलबंदी :- हल्की और गहरी भूमि से सम्मोच बांध और गहरी भूमि में ढलान के विपरित बांध बनायें, इससे भूमि में नमी संचय होगी।

कृषि पक्ष के अन्तर्गत उचित विधि अपनाकर तथा कृषकों को समय पर प्रशिक्षण देकर सिंचाई हेतु जल खेतों में उपलब्ध कराना होता है, कुछ बिन्दुओं के क्रियान्वयन से अच्छे परिणाम प्राप्त होने की संभावनायें बन जाती हैं, जो कि इस प्रकार है :-

• सिंचाई की उन्नत विधियाँ अपनाकर बड़े भाग को संरक्षित किया जा सकता है। सिंचाई में अन्य सभी आवश्यकता की तुलना में दुगने जल की आवश्यकता होती है।

• फव्वारा तथा बूंद बूंद सिंचाई विधियों में जल की 50 प्रतिशत पानी की बचत होती है।बूंद-बूंद या टपक सिंचाई पद्धति में सतह पर छिद्रदार पाईप जाल फैलाया जाता है, जिससे फसल को प्रत्यक्ष रूप में पानी मिल जाता है इस पद्धति में वाष्पीकरण से हानि नहीं होती है तथा लगभग 95 प्रतिशत जल का उपयोग हो जाता है।

• जल संरक्षण के लिए फसल प्रतिरूप के अनुसार उन्नत सिंचाई पद्धतियों को अपनाया जाना चाहिए।

• कृषि जलवायु दशाओं के अनुकूल फसल प्रतिरूप को अपनाया जाये।

• जिले की परिस्थिति के अनुसार कम पानी वाली फसले जैसे :-सरसों, चना, तारामीरा, तिल्ली, ग्वार, धनिया, मसूर, उडद, मूँग, कुसुम, बाजरा, मक्का, ज्वार, आदि फसलों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

• खेतों की मिट्टी की जांच तथा उसका वर्गीकरण करना।

• खेतों की उचित समतलीकरण तथा लेवलिंग करना चाहिए।

• फसल को उचित मात्रा व उचित समय पर सिंचाई करने को प्रोत्साहित करना।

• कृषि भूमि को जल मग्नता से बचाकर व ऊपरी भूमि को वैज्ञानिक विधियों द्वारा कृषि योग्य बनाना चाहिए।

• सिंचाई जल का कृषकों को उनकी भूमि के क्षेत्रफल के अनुपात में बांटना चाहिए।

आँकड़ों के स्त्रोत :-

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध अन्वेषण प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है -

(1) क्षेत्रीय सर्वेक्षण एवं प्राथमिक आँकड़ों का संकलन किया गया है।
(2) प्रस्तुत शोध अध्ययन में विभिन्न प्रकार के प्रकाशित द्वितीयक आँकड़ों का संग्रहण सांख्यिकी विभाग, राष्ट्रीय सूचना केन्द्र, टोंक केन्द्रीय पुस्तकालय - जयपुर, विश्वविद्यालय पुस्तकालय - जयपुर, जिला पुस्तकालय - टोंक, विश्वविद्यालय पुस्तकालय - कोटा एवं सम्बंधित विभागों से किया गया है।
(3) साक्षात्कार, प्रश्नावली एवं अनुसूचियों से प्राथमिक आँकड़ों का संकलन किया गया है।
(4) संबंधित साहित्य संकलन सम्बंधित क्षेत्र के ऐतिहासिक ग्रंथ, शोध ग्रन्थ,गजेटियर, प्रतिवेदन और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में से आवश्यक आँकड़े प्राप्त किये गये हैं।
(5) जिले में जलग्रहण क्षेत्र के आधार पर आँकड़े उपग्रह चित्रों द्वारा प्राप्त किए गए हैं।
(6) छायाचित्र एवं मानचित्रण जिले के जल संसाधनों (प्राकृतिक एवं मानव निर्मित) के स्थानिक प्रारूप वितरण का आवश्यकतानुसार शोध प्रबंध में संलग्न कर मानचित्रों, आरेख, चित्रों तथा चार्ट का भी निर्माण किया गया।

विधि तन्त्र :-

प्रस्तुत अनुसंधान विश्लेषण में टोंक जिले में उपलब्ध भौगोलिक संसाधनों का

प्रबन्धन एवं उसके लिए पोषणीय योजना तैयार करने के लिए निम्न विधियोंको अपनाया गया है
(1) जिले के विभिन्न तथ्यों (जल, वनस्पति,जलवायु आदि) केप्रदर्शन में विभिन्न मानचित्र भिन्न -भिन्न पैमानों पर तैयार किये गये हैं।
(2) विभिन्न नवीनतम शोध आँकड़ों को निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत गुणात्मक एवं मात्रात्मक तकनीकों से विश्लेषित किया गया है।
(3) जिले के भूमिगत जल को बढ़ाने एवं उसकी स्थिरता को बनाये रखने के लिए केन्द्र एवं विभिन्न राज्यों के विचारों, आयोगों, समितियों की तकनीकों व सुझावों का प्रयोग किया गया।
(4) टोंक जिला स्तर पर कृषि के लिए अनेक जल योजनाऐं तैयार कराई गई हेतु स्तर निम्न योजना सूत्रों से ज्ञात किए गये है।

7. निष्कर्ष :-

प्रस्तुत शोध में टोंक जिला के कृषि के विकास का भौगोलिक सर्वेक्षण किया।जिसमें जलग्रहण क्षेत्रों एवं भौगोलिक स्थिति शामिल है। इनसे प्राप्त निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है अध्ययन क्षेत्र में कृषि संसाधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है जिसमें उचित औसत वर्षा भूजल के स्त्रोत पर्याप्त नदियाँ विद्यमान है जिन से वर्षा जल के संसाधनों हेतु कई सिंचाई परियोजनाऐं क्रियान्वित हो सकती हैं।कुआँ सुधार योजना का विस्तार राज्य के अन्य भागों में भी होना चाहिए।अध्ययन क्षेत्र में वर्तमान समय में कुओं का जल स्तर काफी नीचे चला गया है अतः यहाँ भी कुआं सुधार योजना अपनाकर खेतों के व्यर्थ बहने वाले वर्षा जल का संग्रहण किया जा सके।नई तकनीकी अपनाने से अपनाने से जल का अनुकूलतम उपयोग होगा।इसमें जल की गुणवत्ता उपलब्धता शुद्धिकरण मिट्टीजांच इत्यादी शामिल है।अध्ययन क्षेत्र की प्रस्तावित मध्यम एवं लघु सिंचाई परियोजनाओं को गांवों कोलाभांवित किया जाए।

जल संसाधनों के विकास द्वारा क्षेत्र का कृषि विकास सुनिश्चित हुआ है क्षेत्र में जन सहभागिता का विकास हुआ है।जलप्रबन्धन को महत्व देकर प्रदूषण पर नियंत्रण करने का उपाय कियाजाये।परंपरागत कृषि को महत्व दिया जाना चाहिए जल संसाधनों के विकास एवं नियोजन हेतु वैज्ञानिक एवं परम्परागत प्रबन्धन को एक ठोस आयाम देने की सामायिक आवश्यकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, बी. एल. 1990 पर्यावरण नियोजन व पारिस्थितिकीय विकास साहित्य भवन, आगरा
2 नेंगी, पी. एस. 1991 पारिस्थितिकीय विकास एवं पर्यावरण भूगोल रस्तोगी प्रकाशन मेरठ
3. गौतम, अलका 1993 भूआकृति विज्ञान के सरल सिद्धान्त रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ
4. चतुर्वेदी, आर.पी. 1994 भोगोलिक एटलस , भूगोल विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर, विज्ञान प्रकाशन जोधपुर
5. चौहान, तेज सिंह 1994 राजस्थान एटलस , भूगोल विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर, विज्ञान प्रकाशन जोधपुर
6. अवस्थी, एन. एमतिवारी, आर. पी. 1995 पर्यावरण भूगोल मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
7. कलवार, एस. सी. 1996 पर्यावरण व परती भूमि , पॉइन्टर पब्लिकेशन, जयपुर
8. कृष्णा, राम 2014 पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के.बी.सी., नैनों पब्लिकेशन प्रा. लि., दिल्ली

9. राजस्थान जिला गजेटियर 1999 टोंक, जयपुर
10. चौहान, वी. एस. एवं गौतम, अलका 1999 भौतिक भूगोल रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ
11. लोढा, आर.एम. एवं माहेश्वरी, दीपक 1999 मानव व पर्यावरण हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर
12. लोढ़ा, आर. एम. एवं माहेश्वरी, दीपक 1999 राजस्थान का भूगोल हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर
13. विजयवर्गीय, ब्रजेश 1999 जलनिधि (हाड़ौती के जलाशयों का संकट एवं समाधान) हिमांशु पब्लिकेशन, 464, हिरण मगरी सेक्टर 11
14. जाट. बी. सी. 2000 जल ग्रहण प्रबंधन पॉइन्टर पब्लिकेशन जयपुर
15. गुर्जर, आर. के. एवं जाट, बी. सी. 2005 संसाधन एवं पर्यावरण . पंचशील प्रकाशन,चौड़ा रास्ता जयपुर
16. गुर्जर, आर. के. 2001 जल प्रबंधन विज्ञान , पॉइन्टर पब्लिकेशन जयपुर
17. सिंह, जे. 2001 पर्यावरण एवं संविकास ज्ञानोदय प्रकाशन गोरखपुर
18. टोंक जिला सांख्यिकीय रूपरेखा बुक 2013 आर्थिक व सांख्यिकीय निदेशालयराजस्थान,जयपुर
19. चतुर्वेदी, आर. पी. 2006 भौगोलिक शब्दकोश , पृष्ठ सं. 68, 116,117.
20. भल्ला, लाजपत राय 2010 ''राजस्थान का भूगोल'', कुलदीप पब्लिकेशन, जयपुर
21. टोंक जिला सांख्यिकीय रूपरेखा बुक 2010 आर्थिक व सांख्यिकीय निदेशालय राजस्थान, जयपुर
22. शर्मा, जे. पी. 2010 प्रायोगिक भूगोल रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ.
23. सिंह, आर. एन. एवं मौर्य, एस. डी. 2010 भौगोलिक पारिभाषिक शब्दकोश शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
24. छिल्लर, सुशील कुमार एवं मंजूलता 2011 पर्यावरण अध्ययन राहुल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
25. टोंक जिला जनगणना हेण्डबुक, 2011 जनगणना निदेशालय, जयपुर
26. सिंह, गुरूचरन 2012 जल संरक्षण एवं सफाई एवं पर्यावरण इंजीनियरी , स्टैण्डर्ड पब्लिकशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली
27. बंसल, सुरेश चन्द्र,चौहान, पी. के. एवं भ ,एच. पी. 2013 शोध विधितंत्र : भूगोल . मीनाक्षी प्रकाशन,मेरठ
28 प्रो. एस.सी. कलवार सह-पर्यवेक्षक डॉ. एन.के. जेतवाल सहआचार्य भूगोल विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बून्दी (राज0)